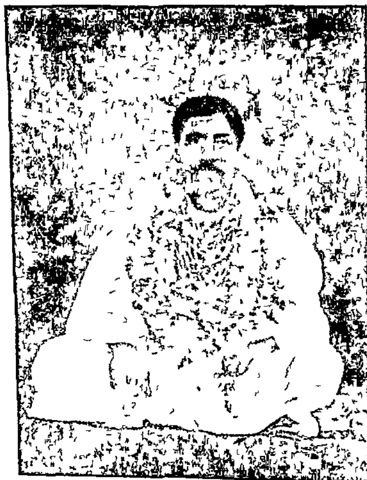
तपोनिष्ठ

महात्मा अरविन्द घोष।



प्रकाशक— दीनानाथ सिगतिया।

तपोनिष्ठ

महात्मा अरविन्द घोष

लेखक—
पारसनाथ त्रिपाठी काव्यतीर्थ

प्रकाशक—
दीनानाथ सिगतिया
हिन्दी साहित्यप्रचार कार्य्यालय,
१३१ मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता।

प्रथमबार १०००] [मूल्य ॥)

वक्तव्य ।

हिन्दी पाठकोंकी सेवामें आज जिन प्रात स्मरणीय महात्मा की जीवनी लेकर उपस्थित हो रहा हूं, उनकी यह जीवनी, आजसे एक साल पहले ही पाठकोंकी सेवामें पहुंच जाती। पर कलकत्तेके दो पुस्तक प्रकाशकोंने, इस सम्बन्धमें मुझे इस तरह से धोखा दिया, जो बहुत चाहनेपर भी उनकी धोखेबाजीके कारण, इसके पहले यह पुस्तक नहीं निकल सकी। ऐसी दशा में मैं अपने स्नेह भाजन बाबू दीनानाथजी सिगतियाका बहुत कृतज्ञ हू, जिन्होंने मेरी यह क्षुद्र रचना हिन्दी पाठकोंके सामने रखी। आशा है, पाठक, मेरी अन्य रचनाओंकी तरह इस रचनाको भी अपनायेंगे और महात्मा अरविन्दके अनुगामी हो, मातृभूमिका गौरव बढ़ावेंगे।

पटना,
ज्येष्ठ कृष्णा ८, स० १९९१।

निवेदक—
पारसनाथ त्रिपाठी।

* वन्दे मातरम् *

तपोनिष्ठ

महात्मा अरविन्द घोष।

पहला परिच्छेद

जन्म और बाल्यावस्था



न् १८७२ ई० की १५ वीं अगस्त को कलकत्ते के स्वनामधन्य श्रीराजनारायण वसु की ज्येष्ठा कन्या श्रीमती स्वर्णलता देवीके गर्भसे योगी अरविन्दका जन्म हुआ। चरित्र नायकके पिता श्रीकृष्णधन घोष पहले अपने मकानपर ही रहकर चिकित्सक का काम करते थे, पर जब उन्होंने देखा कि इस प्रकार कूपमण्डूकवत् पड़े रहकर जीवन व्यतीत करना अच्छा नहीं है, तब उन्होंने आई० एम० एस० की परीक्षा देनेके लिये इङ्गलैण्डकी यात्रा की। अपने ससुर

राजनारायण बाबूके बहुत आग्रह करनेपर भी कृष्णधन घोष पूरे साहब बनकर स्वदेशको लौटे। पर पोशाक परिच्छेद प्रभृतिमें साहेबियाना ठाट रहनेपर भी उनके हृदयमें मधुसूदन दत्तकी तरह अपनी मातृ भूमिकी भक्ति लबालब भरी थी। उनके हृदयकी प्रशंसनीय प्रवृत्तियां नष्ट नहीं हुई थीं वरन् पाश्चात्य विद्याके प्रभावसे वे सब और भी अधिक परिमार्जित और जागृत हो गयी थीं। दुखियोंके दु ख देखकर—व्यथितोंकी व्यथा जानकर उनका हृदय पिघलकर पानी पानी हो जाता था। दरिद्रोंकी दीनता दूर करनेके लिये वह हाथ खाली रहनेपर भी बराबर जी खोलकर दान दिया करते थे। आपकी इस दान-शालताके कारण आपके पुत्रोंको अर्थाभावसे प्राय कष्ट भोग करना पडता था। प्रति मास हजार दो हजार रुपयेकी आमदनी रहनेपर भी महीनेके अन्तमें आपके पास एक कौडी भी नहीं रह जाती थी। यही कारण है, कि आज भी यशोहर और खुलना जिलेमें के डी घोषका नाम अजर अमर है।

अरविन्दके पिता कृष्णधन घोषने अपने पुत्रोंको अंगरेजीकी पूर्ण शिक्षा देनेका सङ्कल्प किया था। बालक अरविन्दकी अवस्था अभी पाँच वर्षकी भी नहीं हुई थी, कि उन्होंने अपना उक्त सङ्कल्प कार्य्यरूपमें परिणत करनेके लिये उन्हें दार्जिलिङ्गके सेंटपाल स्कूलमें पढनेके लिये भेज दिया। यहां अपनी प्रतिभाके कारण बालक अरविन्द बहुत शीघ्र सबके प्रियपात्र हो गये। विदेशी शिक्षकोंमें अधिकांश उनकी प्रतिभाका परिचय

पाकर मुग्ध हो गये। बालकके प्रशान्त नेत्र और चिन्ताशील भाव देखनेपर कोई ऐसा नहीं था, जो उसे बिना प्यार किये रह सकता। सहपाठियोंमें भी अधिकाश बालक अरविन्दकी सुजनतापर मुग्ध रहते थे।

दार्जिलिङ्गमें दो वर्षतक शिक्षा प्राप्त करनेके बाद सात वर्षके अरविन्द बड़े पुत्र विनयभूषण, द्वितीय पुत्र मनोमोहन, स्त्री स्वर्णलता और कन्या सरोजिनीको लेकर उनके पिता बा० कृष्णधन घोष अपनी संतानोंको उच्च शिक्षा देनेके लिये इङ्गलैण्ड चले गये। इस अल्प अवस्थासे ही विदेशियोंके साथ रहनेके कारण बालक अरविन्द अपनी मातृभाषा बिल्कुल भूल गये। यहांतक कि बीसवें वर्षकी अवस्थामें उन्होंने मातृभाषा सीखी थी। यह बड़े आश्चर्यकी बात है, कि जिस महात्माने देशकी स्वाधीनताके लिये अपना सर्वस्व त्याग दिया, बीस वर्षकी अवस्थातक उसीका अपनी मातृ-भाषासे कोई सम्बन्ध नहीं था।

मैञ्चेष्टरमें कुछ समयतक रहनेके बाद बालक अरविन्दने लण्डनके सेन्टपाल स्कूलमें भर्ती हो पढ़ना आरम्भ किया। यहां भी वे अपनी प्रतिभाके द्वारा शीघ्र ही सबके प्रिय हो गये। स्कूलकी पढ़ाई समाप्तकर वह कालेजमें भर्ती हो सिविलसर्विस परीक्षाके लिये तयारी करने लगे।

दूसरा परिच्छेद ।

युवावस्था ।



सन् १८९० में अट्ठारह वर्षकी अवस्थामें अरविन्द सिविल सर्विस परीक्षामें सम्मिलित हुए, पर घुड़सवारीमें उत्तीर्ण न हो सकनेके कारण सफल मनोरथ न हुए और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयमें पुन पढ़ना आरम्भ कर, सन् १८९२ ई० में ट्राइप्स (सम्मान) परीक्षामें प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण हो गये। बहुतोंकी धारणा है, कि सिविल सर्विस परीक्षामें सफलता नहीं मिलनेके कारण ही उनके जीवनकी गति, दूसरी ओर लौट गयी थी और वह स्वदेशकी भलाई करनेके लिये अग्रसर हुए थे। पर उनके जीवनकी परवर्ती घटनाओंकी अच्छी तरहसे आलोचना करने पर यह धारणा दूर हो जाती है। इङ्गलैण्डसे लौटनेके बाद उन्हें अत्यन्त सम्मान पूर्ण पद मिला था, पर उससे भी उनको स्वदेश सेवाकी प्रबल वासना नष्ट नहीं हुई।

ट्राइप्स परीक्षामें उत्तीर्ण होनेके थोड़े ही दिन बाद, इङ्गलैण्डमें बड़ोदा राजके साथ इनकी घनिष्ठता हो गयी और उन्हींके अनुरोधसे वह स्वदेश लौटनेके बाद बड़ोदा-महाराजके पर्सनल असिस्टेण्टके पदपर नियुक्त हुए। कुछ दिनों तक वहां प्राइवेट

सेक्रेटरीका काम करनेके बाद अरविन्द बाबू बड़ौदा कालेजके प्रधानाध्यापक और उसके बाद सहायक अध्यक्ष नियुक्त हुए। ये दोनों काम सिविल सर्विससे किसी अंशमें भी कम लाभप्रद और सम्मानजनक नहीं थे।

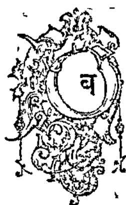
यदि अरविन्द सांसारिक उन्नति और मान प्रतिष्ठाको ही अपने जीवनका लक्ष्य समझते तो बड़ोदामें उन्हें उसकी यथेष्ट प्राप्ति हो गयी थी और वहाँ कुछ दिन और रह जाते, तो और भी अधिक मान प्रतिष्ठा उन्हें प्राप्त होती। शिक्षा विभागमें अत्युच्च पद पाकर बड़ोदाके विद्यार्थियोंके वह अत्यन्त प्रिय हो गये थे, सर्वसाधारणकी भी उनमें अच्छी श्रद्धा भक्ति थी और बड़ोदाके महाराज भी उन्हें अत्यन्त विश्वास और स्नेहकी दृष्टिसे देखते थे। बड़ोदामें उन्हें किसी बातकी कमी नहीं थी। सांसारिक सुख स्वच्छन्दता भी यहां खूब मिली थी। वह वहाँ लगातार १२ वर्ष तक रहे। और भी कुछ दिन यदि वहाँ रहते, तो और भी अपनी बहुत कुछ उन्नति कर सकते।

पर इन सब बातोंकी ओर उनका लक्ष्य ही नहीं था और इस मान प्रतिष्ठा धन दौलत पर लात मारनेमें उन्हें एक छिनकी भी देर नहा लगी। जब उन्हें मालूम हो गया, कि यह मेरा कार्य्यक्षेत्र नहीं है, जब उन्होंने समझा कि भगवानने मुझे स्वदेशकी सेवा करनेके लिये भेजा है, तब किसी प्रकारका भी प्रलोभन, उन्हें वहाँ नहीं रख सका।

बडोदामें रहनेके समयसेही वह स्वदेश-सेवा रूप महान् क के लिये प्रस्तुत हो रहे थे। उनका अधिकांश समय वहा अध यनमें ही व्यतीत होता था और आत्मोन्नति करनेकी ओर ही व बराबर लक्ष्य रखते थे। अरविन्द बाबूकी बातोंसे ही मालू होता है, कि बडोदामें ही उन्होंने भगवानके पानेका प्रयत्न प्र र कर दिया था।

तीसरा परिच्छेद।

कर्मक्षेत्र



डोदामें बारह वर्ष रहनेके बाद सांसारिक सुख-स्वच्छन्दता पर लात मारकर एक अना सक्त कर्मवीरके समान जिस दिन अरविन्दने स्वदेश सेवाको ही अपने जीवनका प्रधान व्र स्थिर किया और स्वदेशको भुवन-मोहिनी माता समझकर उसकी पूजाको अपने जीवनका प्रधान कर्त्तव्य समझकर बङ्गालमें पदार्पण किया, वह दिन बङ्गाल ही क्यों, सारे भारतके लिये चिरस्म रणीय रहेगा। उसी समय बङ्गाल अपनी प्रगाढ निद्राके बाद जागृत होनेके लिये करवटे बदल रहा था। लार्ड कर्जनके बङ्ग विच्छेदवाले प्रस्तावके पीछे बंगाली हाथ धोकर पड रहे थे। उस

समय सारे देशमें जागृतिका एक अपूर्व चिह्न दृष्टिगोचर हो रहा था। जातीय जीवनके इस नूतन प्रभातके समय अरविन्द केवल अपने स्वार्थको लेकर ही बैठे नहीं रह सके। अपनेको सांसारिक कामनाओंसे मुक्तकर यह आदर्श कर्मवीर एक मात्र भगवानके भरोसे कर्मक्षेत्रमें कूद पड़ा।

कर्मक्षेत्रमें आते ही कर्मवीर अरविन्दने समझा, कि देशमें भलीभाँतिसे स्वाधीनताका भाव लानेके लिये जातीय शिक्षाकी अत्यन्त आवश्यकता है। कोमलमति बालकोंके हृदयोंपर स्वदेश प्रेमका बीज अङ्कुरित करनेके लिये जातीय विद्यालयोंकी आवश्यकता सबसे अधिक है। थोड़ी अवस्थासे ही हमारे बालकोंको बिलकुल विजातीय भावकी शिक्षा दी जाती है। जब उनकी मानसिक वृत्तियां बहुत कोमल रहती हैं, तभीसे विदेशी भाव, विदेशी आदर्श और स्वदेशके प्रति घृणाका बीज हमारे बालकोंके मानस-पटपर अङ्कुरित हो जाता है। लड़कपनहीसे उन्हें शिक्षा दी जाती है, कि भारतवासियोंके पूर्व पुरुष असभ्य थे। युरोपियनोंके सहयोगसे ही इनमें धीरे-धीरे सभ्यताका सञ्चार हो रहा है। इतिहासोंमें इन्हें पढ़ाया जाता है, कि शिवाजी लुटेरा था, नन्दकुमार ठग था और हमारे हिन्दू राजाओंमें भी अधिकांश कल्पित दोषोंसे दूषित थे। प्रतापादित्य, प्रतापसिंह और पृथ्वीराजके समान स्वदेशहितैषियोंके सम्बन्धमें बालकोंको एक अक्षर भी नहीं पढ़ाया जाता और क्लाइवेल तथा नेपोलियनकी प्रशंसासे इतिहासके पृष्ठके पृष्ठ भर पड़े रहते हैं। बहुत

छोटी अवस्थासे ही हमारे बालकोंके हृदयमें यह भाव बद्धमूल कर दिया जाता है, कि क्रामवेल और नैपोलियनके समान स्वदेशहितैषी इस देशमें नहीं थे, जिससे विचारे बालकोंमें आत्म-विश्वास नहीं रहने पाता। पहले पहल अरविन्दने ही इस देशको बताया था, कि इस शिक्षासे हमारी भारी हानि हो रही है। उन्होंने उसी समय निश्चय किया, कि देशमें ऐसी शिक्षा देनेकी आवश्यकता है, जो केवल जातीय-धारापर ही नहीं चलेगी, उससे देशमें एक पूर्ण जीवनका छन्द— भारतकी सृष्टिकी एक नई भङ्गी—एक जातीयताका भाव भी लाना होगा और ऐसी ही शिक्षासे इस देशमें एक शक्तिशाली "जातिका सङ्गठन" हो सकता है।

इस उद्देश्यको लेकर ही, अरविन्दने कलकत्तेकी नवीन संस्था 'जातीय शिक्षा-समिति" के (National Council of Education) अध्यक्षका पद ग्रहण किया। पर थोड़ेही दिन काम करनेके बाद उन्हें विवश होकर उक्त समितिसे अपना सम्बन्ध तोड़ देना पड़ा। अरविन्दके सम्बन्ध विच्छेद करनेका प्रधान कारण यह था, कि जिन लोगोंके हाथमें समिति-सञ्चालन का भार था वे लोग नवीनके साथ प्राचीनका एक कृत्रिम सम्बन्ध करने लगे। वह लोग जातीय जीवनके दुर्गन्धमय सड़े अंशको नष्ट करनेके लिये तैयार नहीं थे। उन्हें बिल्कुल परिवर्त्तन करने और जातीय जीवनको पूर्णरूपसे पुनर्जीवित करनेमें भय मालूम होता था। पर अरविन्दकी राय थी कि नवीन

में पुरातनका मयोग नया कलेवर धारण करेगा तभी इस मृत-प्राय अवस्थामें भी, हमारा जातीय-जीवन जीवित रह सकता है। अरविन्द पूर्ण परिवर्तनके पक्षपाती थे। नवयुगके आलोकमें भारतके प्रनष्ट जातीय भावको नयेरूपसे फिर लाया जाये और विजातीय भावको नष्ट कर दिया जाय, यहा अरविन्दने इसका अभाव देखा, इसीसे धीरे धीरे उससे सब सम्बन्ध उन्होंने छोड़ दिया। वे समझते थे, कि युरोपका अनुकरण करनेसे भारतकी आत्मा प्रकाशित नहीं हो सकती। उनके इस मतमें आज भी परिवर्त्तन नहीं हुआ है। Ideal of Human Unity नामक ग्रन्थमें ये भलीभांति यह बात स्पष्ट कर देना चाहते थे, कि जातीय शिक्षाको राष्ट्रीय शिक्षाके साथ मिला देनेसे काम नहीं चलेगा। किसी भी सामञ्जस्यकी रक्षा करनेसे काम बिगड़ जायेगा, उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा। राष्ट्रीय शिक्षासे जातिकी कुछ विशेष उन्नति नहीं होती। उस शिक्षाका मुख्य उद्देश्य होता है, साचेमें ढालकर लड़कोंको तैयार करना। कुछ कड़े नियमोंकी पाबन्दीसे लड़कोंकी बुद्धिके प्रसारमें बाधा डालना ही इसका प्रधान उद्देश्य है। जातीय शिक्षा समितिसे सम्बन्ध छोड़कर अरविन्दने "वन्दे मातरम्" पत्रसे अपना सम्बन्ध जोड़ा और थोड़े ही दिनोंमें उसके सम्पादक बन बैठे। यहाँ आकर देशकी वास्तविक भलाई करनेका उन्होंने अच्छा अवसर पाया। "वन्दे मातरम्" में उन्होंने जो सब लेख लिखे उनमें अधिकांश जैसी सारगर्भिता तथा चिन्ताशीलताके परिचायक थे, वैसे ही

ओजस्विनी भाषामें भी लिखे हुए थे। प्रत्येक प्रबन्धमें वे निद्रित स्वजातिको कर्त्तव्यका पथ दिखाते थे।

इसी समय उनकी दृष्टि जातीय महासभा (National Congress) के ऊपर पड़ी। उन्होंने देखा, कि इस महासभा को सजीव बनानेकी अत्यन्त आवश्यकता है। इसी लिये अपने कितने ही स्वदेशप्रेमी मित्रोंके साथ इसके लिये बड़ा उद्योग करने लगे। सन् १९०, ई० में कांग्रेस कलकत्तेमें निमन्त्रित हुई। अरविन्द प्रभृति लोगोंके प्रयत्नसे उस समय सर्व्व सम्मतिसे यह प्रस्ताव पास हुआ, कि स्वराज्य प्राप्त करना ही इस जातीय महासभा प्रधान उद्देश्य है, पर दूसरे वर्ष सूरतकी कांग्रेसमें इस प्रस्तावको रद्द करनेके लिये जो गड़बड़ो मचा, वह सब लोगोंको मालूम ही है। अरविन्दने कांग्रेसके सम्बन्धमें जिन सब परिवर्त्तनोंके प्रस्ताव किये थे वे अत्यन्त युक्तियुक्त थे। उनकी इच्छा थी, कि केवल स्वदेशप्रेम तथा जातीय भाव जागृत करनेकी व्यवस्था करना ही जातीय महासभाका उद्देश्य न रहे; बल्कि वहां ऐसी व्यवस्था रहनी चाहिये जिसके द्वारा कुछ वास्तविक काम हो।

इस समय अरविन्दके ऊपर बहुतसे कामोंका भार पड़ गया था। एक तो 'वन्देमातरम्' का सञ्चालन भार, उसके ऊपर कांग्रेसका काम। सूरत कांग्रेससे लौटकर आपने अपनी स्त्रीके पास जो पत्र भेजा था, उसको देखनेसे मालूम होता है कि इस

समय कामोंकी कितनी भीड थी। आपने अपने उस पत्रमें लिखा था —

"क्या मेरी एक बात सुनोगी? इस समय मेरे लिये बडी चिन्ताका समय उपस्थित है, चारों ओर इस प्रकार कामोंका जंजाल पडा है, जिससे पागल हो जानेकी सम्भावना है। इस समय यदि तुम उत्साहवर्द्धक और सान्त्वनापूर्ण पत्र लिखोगी तो मुझे विशेष शक्ति मिलेगी। प्रसन्नताके साथ सभी विपदाओं और भयोंको सहन कर सकूंगा।"

चौथा परिच्छेद।

विपदमें।



गवर्मेण्टके अन्यायके पीछे जिस प्रकार अरविन्द पडे थे, उसे देखकर बहुतोंको आशङ्का हुई थी, कि बहुत शीघ्र अरविन्द के ऊपर भी नौकरशाहीकी शनिदृष्टि पडेगी। इस आशङ्काके कार्य्यमें परिणत होनेमें अधिक विलम्ब नहीं हुआ। सन् १६०८ ई० के मई महीनेमें षडयन्त्रकारियोंकी पिस्तौल और डिनामाइट देनेका अभियोग लगाकर ये पकडे गये। उनके साथियोंमेंसे भी बहुतसे पकडे गये। ६१ लोगोंके विरुद्ध

अभियोग प्रमाणित करनेके लिये बड़ी तैयारी हुई। कुछ दिनों तक लालबजारके कैदखानेमें रखकर, अरविन्दको अलीपुरके जेलमें भेज दिया गया। एक वर्षसे भी अधिक मुकद्दमा चला और अन्तमें प्रसिद्ध बारिस्टर देशबन्धु चित्तरञ्जनके प्रयत्नसे अरविन्द कारामुक्त हुए। अभियोग झूठा सिद्ध हुआ। वर्ष दिनसे भी अधिक जेलकी यन्त्रणा भोगने पर भी वे जरा भी विचलित नहीं हुए। कारागृहमें भी वे अपनी साधनामें तल्लीन थे। उन्होंने स्वयं अपने भाषणमें कहा है, 'मैं जानता था, कि मैं छूट जाऊँगा। इस एक वर्षतक जेलमें जो मेरा जीवन व्यतीत हुआ है, उससे मुझे एकान्त वासका अवसर तथा बहुत कुछ शिक्षा भी मिली है। जब भगवानकी इच्छा नहीं थी तब किसकी ऐसी शक्ति थी जो मुझे जेलमें रख सकता? उन्होंने मुझे कुछ सीखनेके लिये—एक महान् कार्य्य करनेके लिये जेल भेजा था। यह वार्त्ता यदि घोषित नहीं होती, इस कार्य्यके करनेकी आवश्यकता नहीं आ पहुंचती, तो कौन सी मानवी शक्ति मुझे जेल भेजनेमें समर्थ होती?"

कारावाससे मुक्त होकर उत्तरपाड़ामें अपनी कारावास की साधनाके सम्बन्धमें उन्होंने जो भाषण दिया था, उसीसे उनके कारावासके समयकी मानसिक अवस्थाका पूरा पता लगता है,—

"जब मुझे बन्दी बनाकर लाल बजारकी हाजतमें ले चले, तब मैं थोड़ी देरके लिये विश्वास-रहित हो गया था। मैं उनकी

(भगवानकी) इच्छाकी उपलब्धि नहीं कर सका। हृदयमें भय का सञ्चार हुआ। मनही मन कहने लगा—"भगवान यह क्या हुआ? मेरा विश्वास था, कि देशके लोगोंके प्रति मेरा कुछ कर्त्तव्य है और जबतक मेरा यह कर्त्तव्य पूरा नहीं होगा, तब तक मुझे जीवित रखोगे। फिर मेरी यह दशा क्यों हुई?" एक दिन बीता, दो दिन बीता, तीसरे दिन भगवानकी वाणी मेरे अन्तरमें पहुंची और अन्तरस्थित दैवीशक्तिने कहा—"शान्तिके साथ प्रतीक्षा करो।" उसी समयसे मैं प्रतीक्षा करने लगा। रात दिन उनकी वाणी सुननेके लिये मैं कान खड़े किये रहता था।"

कारागृहमें वे भगवानकी आज्ञा सुननेके लिये केवल कान ही नहीं खड़े किये रहे, परन्तु भगवानका आदेश उन्हें मिला भी था। उन्होंने इसी कारागृहमें बैठकर गीताका धर्म समझनेकी चेष्टा की थी। उनका वह चेष्टा फलवती हुई। गीताका धर्म आपको मालूम हो गया और उसीके अनुसार आपने कार्य भी आरम्भ कर दिया। भगवानको निकट पाकर उन्होंने कारागारमें एक वर्ष बड़ी शान्ति और सुखसे व्यतीत कर दिया। इसीसे कारागारकी यन्त्रणा उनके हृदयपर घर नहीं कर सकी।

इस विपद्के बाद भी अरविन्दकी कार्य्यकारिणी शक्ति चुपचाप नहीं रह सका। कुछ हा दिनोंके बाद वे अँग्रेजी साप्ताहिक पत्र "कर्मयोगिन्" और बङ्गला साप्ताहिकपत्र "धर्म"में लेख लिखने लगे। आपके इन प्रबन्धोंका उद्देश्य था, कि सनातन हिन्दू धर्मके ग्रथों का अर्थ समस्त संसारके आगे रखा जाय।

सन् १९१० ई० में मार्च मासके कर्मयोगिनमें राजद्रोह सूचक प्रबन्ध लिखनेके लिये उनके विरुद्ध फिर अभियोग कायम किया गया और उन्हें जेलमें देनेके लिये आज्ञा भी हो गयी। परन्तु अरविन्द बहुत ही शीघ्र एकान्तवास करनेके लिये चले गये। इस प्रकार भाग जानेको अधिकांश लोग कापुरुषताका लक्षण समझते हैं। पर उन्होंने सोचा था, कि कर्मक्षेत्रमें अवतीर्ण होनेके लिये मुझमें और भी शक्तिकी आवश्यकता है। उन्होंने समझा था, कि अन्तर्स्थित ईश्वरीय शक्तिको भली-भाँति जागृत करनेके लिये जबतक पूर्णरूपसे ब्रह्मतेज नहीं प्राप्त कर लिया जायगा, तबतक इस पतित जातिका उद्धार नहीं किया जा सकता। उस शक्तिको प्राप्त करनेके लिये एकान्तमें एकाग्र होकर साधना करनेकी आवश्यकता है। एकाग्र होकर वही साधना करनेके लिये वह एकान्तमें गये हैं। साधनाके सिद्ध होनेपर यथेष्ट शक्ति प्राप्तकर वे फिर स्वदेश लौटेंगे और कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण होंगे।

पांचवां परिच्छेद ।

साधना ।



यतक योग सम्बन्धी साधना नहीं होती, तबतक अन्तस्थित ईश्वरीय शक्तिको भलाभांति जागृत नहीं किया जा सकता। जबतक यह शक्ति जागृत नहीं होती, तबतक न तो कोई महान कार्य्यका सम्पादन ही किया जा सकता है और न किसी प्रवल शक्तिके विरुद्ध कोई खड़ा ही हो सकता है। जीवोंके अन्तर में सर्व्वदा विराजमान भगवानको विना जागृत किये, अपनी शक्तिका निःसीम झरना नहीं खुलना; क्योंकि जीवके ही भूमा स्वरूपका नाम भगवान है। विना अपने भलीभांति प्रतिष्ठित हुए मानवजातिके लिये नवीन सभ्यताकी भित्ति नहीं बनायी जा सकती।

जिस समय अरविन्द बड़ोदामें थे, उसी समयसे आप इस साधनाकी आवश्यकता समझते थे और स्वदेशका उद्धार करनेके पूर्व्वसे ही आपने यह साधना आरम्भ की थी। उत्तरपाड़ाकी वक्तृतामें इन्होंने अपनी प्रथम साधनका उल्लेख कर कहा था —

"जब मैं पहले पहल भगवानकी ओर अग्रसर हुआ था, तब न तो ठीक भक्तकी तरह और न ज्ञानीकी तरह ही। स्वदेशी

आन्दोलन आरम्भ होनेके पहले ही बड़ोदामें मैंने उनका सन्धान पाया था।"

"जब मैं पहले पहल उनकी खोजमें चला था तब उनके अस्तित्वमें मेरा पूर्ण विश्वास नहीं था। उस समय पूर्ण नास्तिकता मेरे हृदयमें विद्यमान थी। परन्तु तो भी वेद और गीताका सत्य पानेके लिये कौन मुझे उस ओर खींच रहा था, सो नहीं कह सकता। उस समय मेरे मनमें ऐसा हुआ, कि योगके भीतर शायद बड़ा भारी सत्य छिपा है। मुझे मालूम हुआ, कि वेदान्त धर्म्म किसी महान् सत्यके ऊपर स्थापित है। जब मैंने योगकी साधना आरम्भ की, तब मुझे मालूम हुआ कि जो मैंने सोचा था वह बिलकुल सत्य है। उस समय मैंने मनही मन कहा—"भगवन्, यदि तुम हो, तो मेरे हृदयका हाल तुम भलीभांति जानते हो। तुम जानते हो, कि मैं मुक्ति नहीं चाहता। अन्यान्य मनुष्य जो चाहते हैं, वह मैं नहीं चाहता। मैं चाहता हूं, इस पतित जातिका उद्धार करनेकी शक्ति, जबतक जीवित रहूँ तबतक इस जातिके लिये कुछ काम कर सकूं।" अपनी स्त्री मृणालिनीके पास जो पत्र लिखे थे, उसमें भी इस नयी तपस्याके आरम्भका उल्लेख है—

"और लोग अपने स्वदेशको एक जड़ पदार्थ समझते हैं, उनके विचारसे मैदान खेत, वन, पर्वत और नदीका समुदाय ही उनका स्वदेश है। मैं स्वदेशको माता समझकर उसकी पूजा तथा भक्ति करता हू। माताके वक्षस्थलपर बैठकर यदि राक्षस उसका

रक्तपात करनेको उद्यत हो, तो उस समय लड़केका क्या कर्त्तव्य है? निश्चिन्त होकर बैठे बैठे भोजन करे या माताका उद्धार करनेके लिये दौड़ पड़े। मैं जानता हूँ, कि इस पतित जाति के उद्धार करनेकी शक्ति मेरे पावोंमें है, पर यह शारीरिक शक्ति नहीं है। तलवार या बन्दूक लेकर मैं युद्ध करने नहीं जाता। मैं ज्ञानके बलसे इस पतित जातिका उद्धार करने जाता हूं। क्षात्रतेज ही एकमात्र तेज नहीं है, ब्रह्मतेज भी कोई तेज है। ज्ञानके ऊपर इस तेजकी प्रतिष्ठा है। यह भाव नया नहीं है—आजकलका यह भाव नहीं है। यह भाव मेरे नस नसमें व्याप्त हो रहा है। भगवानने इसी महाव्रतका साधन करनेके लिये इस संसारमें मुझे भेजा था। ... मेरी जीविता-वस्थामें ही कार्य सिद्ध हो जायेगा, यह मैं नहीं कहता परन्तु होगा निश्चय।"

अलीपुर जेलमें रहते समय वह योग मार्ग बहुत कुछ तय कर चुके थे, इसका पता उनके उत्तरपाड़ावाले भाषणसे भली-भाँति मालूम हो जाता है। अलीपुर जेलमें गीताका साधन आरम्भ करनेके बाद ही वह सर्वत्र ईश्वरीयसत्ताका अनुभव करने लगे थे। जेलके अन्यान्य अपराधियोंमें, सन्तरीमें, अदालतमें, विचारकर्त्तामें, सबत्र ही वे नारायण का आविर्भाव अनुभव करने लगे। साधनाके मार्गमें मिली हुई दैवी शक्तिके द्वारा ही उन्होंने कारागारकी यन्त्रणाको अत्यन्त तुच्छ समझा था।

साधनाके मार्गमें और अधिक अग्रसर होनेके लिये ही उन्होंने कार्यक्षेत्रसे कुछ दिनोंतक अवकाश लिया था। "एकान्तमें साधना करनेकी आवश्यकता है", यह उन्हें पहले ही मालूम हो गया था और इसका उल्लेख भी ऊपर किया जा चुका है। "पकडे जानेके एक मास पहले ही भगवानकी इच्छा मुझे मालूम हो गयी थी। उन्होने चाहा था, कि कार्य बन्दकर एकान्तमें मैं अपनेको भलीभाँति पहचान लूँ। पहले भगवानके साथ दृढ सम्बन्ध स्थापित कर लेना आवश्यक है। काम छोडनेसे कष्ट बोध हुआ, इसीसे उस समय मैंने वैसा नहीं किया। अपने अहङ्कारको अच्छी तरह दमन नहीं कर सका था, इसीसे उस समय मैं नहीं समझ सका, कि अवसर पडनेपर मेरे कामको करनेके लिये और भी लोग मिले गे।"

अपने हृदयमेंसे ईश्वरको भलीभाति ढूढ निकालनेके लिये उन्होंने उपयुक्त समयपर एकान्तवास करनेके लिये यात्रा की थी, भय या कायरतासे नही। केवल यह समझकर, कि भगवानको अपने भीतरसे ढूढ निकाले विना कोई महान् कार्य नही किया जा सकता। गत ११ वर्षोंतक साधनाकर उन्होंने पूर्णयोगका जो सत्य पाया है, "आर्य" नामक अङ्गरेजी पत्रके द्वारा धारा वाहिक रूपमें उसका प्रचार कर रहे हैं। उनकी बातोंसे यह साफ मालूम हो जाता है, कि उनकी साधना अपनी मुक्तिके लिये नहीं है, वह आत्मोन्नति करके ही नहीं रह जायेंगे। उनकी साधना जातिके मङ्गलके लिये है देशके मङ्गलके लिये है

और संसारके मङ्गलके लिये है। पतितोंका उद्धार करनेके लिये ही—इस पतित जातिकी सर्वाङ्गीन उन्नति करनेके लिये ही वे अपनी साधनाको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिये व्याकुलताके साथ इस मानव-कुलमें अपने आदर्शको इसी जीवनमें सफल कर रहे हैं। साधनामें सफलता मिलनेपर फिर कर्मवीर अरविन्द कर्मक्षेत्रमें अवतीर्ण होंगे।

छठा परिच्छेद।

धर्मशिक्षा और अरविन्द।



नातन धर्मकी उल्लिखित प्रणालीके अनुसार साधना करके ही अरविन्द सन्तुष्ट नहीं है। धर्ममें शिवत्व प्राप्त कर उस पूर्ण ज्ञान, पूर्ण शक्ति और पूर्ण आनन्दका मानव-जीवनमें विकाश करनेके लिये ही इन्होंने यह व्रत धारण किया है। हमलोग हिन्दू होकर भी हिन्दू धर्मका समझनेका प्रयत्न नहीं करते, इसीलिये उन्होंने कई बार इस बातका आक्षेप किया है। आपका कहना है "सब कोई कहते हैं, कि वेद हिन्दूधर्मकी प्रतिष्ठा है, परन्तु बहुत थोड़े आदमी उस प्रतिष्ठा के

स्वरूप तथा मर्म्मको समझते हैं। यद्यपि हम लोगोंने सुना है, कि वेद के दो भाग हैं,—कर्म्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड,—पर यह हम नहीं जानते, कि असल कर्म्मकाण्ड क्या है और असल ज्ञानकाण्ड क्या है। हमलोग मोक्षमूलर कृत ऋग्वेदकी व्याख्या पढते हैं या रमेशचन्द्रदत्तके बंगला अनुवाद को पढ लेते हैं, पर यह नहीं जानते, कि ऋग्वेद क्या है। मोक्षमूलर और दत्त महाशयने हमलोगोंका यही ज्ञान मिला है, कि ऋग्वेदके ऋषि प्रकृतिके बाह्य पदार्थ और भूतोंकी पूजा करते थे। सूर्य, चन्द्र, वायु अग्नि इत्यादिके स्तव-स्तोत्र ही सनातन हिन्दू धर्म्मका वह अनादि, अनन्त अपौरुषेय ज्ञान है। हमलोग इसी बात पर विश्वास कर वेदके ऋषियों तथा हिन्दूधर्म्मका निरादर करते हैं। अपनेको समझते हैं, कि हम बड़े विद्वान हैं। असलमें वेदमें सत्य-मत्य क्या है, इसका कुछ भी अनुसन्धान नहीं करते।"

योगी अरविन्द सदासे हिन्दू धर्म्मका सभी धर्म्मोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ समझते आ रहे हैं। "आर्य" पत्रमें प्रकाशित उनके लेखोंके देखनेसे भली भांति मालूम होता है, कि हिन्दू-दर्शन तथा धर्म्म-शास्त्रोंका उन्होंने सम्यक्‌रूपसे अध्ययन किया है और शास्त्रोंमें लिखे हुए सत्यको स्वयं प्राप्त किया है।

उपनिषद्‌के धर्म्मके सम्बन्धमें हम लोगोंमें अधिकांश लोगोंको कुछ भी ज्ञान नहीं है। उपनिषद्‌की सार्थकता कहाँ है, यह हमलोगोंकी धारणाके अतीत की बात है। हमलोग उसके सत्य अर्थको न तो समझते हैं और न समझने की कोशिश ही करते हैं।

अरविन्दके मतसे उपनिषद्का अर्थ गूढ़ स्थानमें प्रवेश करना है। ऋषियोंने तर्कके बलसे, विचारके प्रसार और प्रेरणाके द्वारसे उपनिषद्में कहे हुए ज्ञानको नहीं प्राप्त किया था। वे गूढ़ स्थानके समस्त ज्ञानकी कुञ्जी मनके जिस निभृत स्थानमें रखी हुई है, योगद्वारा उसके अधिकारी होकर और उस स्थानपर पहुँच, उस कुञ्जीसे-उसके (उपनिषद्के) अभ्रान्त ज्ञानके विस्तीर्ण राज्यके राजा हुए थे। मनुष्यके वृहत् या भूमा स्वरूपके भीतर अनन्त ज्ञान, शक्ति और आनन्द भरा हुआ है, वही अनन्त-स्वरूप, इस सान्त जीवाधारका नियन्ता है मनुष्यके सान्त तथा अनन्तका मेल, जीवनका अभिनव विकाश तथा साफल्यही अरविन्दकी इस साधनाका मूल सूत्र है। धार्मिक-जीवन और व्यवहारिक-जीवन ये दोनों आपसमें एक दूसरेके विरोधी थे। इसी दैन्य, इसी भेद और असामञ्जस्य को दूर करने पर मानव सभ्यता अपूर्व उन्मेषके नव राज्यमें अधिष्ठित होगी, इसमें सन्देह ही क्या है? भगवान मानकर हम जिसको चाहते हैं जिसके लोभमें पड़कर संसारको माया समझ उसका परित्याग करते हैं, आनन्दका धनी मायावी, जिसकी लीला से सृष्टि लीलामय हो रही है, सृष्टि करके ही अपने अनन्तत्वको पूर्ण सार्थक करता है, यह सहज सत्य इतने दिनोंतक भूल गया था, इसीसे धर्म इस संसारको धारण नहीं कर सका। अरविन्दकी साधनासे इसका प्रत्यक्ष होने पर संसारमें कितना परिवर्त्तन होगा, इसके सोचनेपर हृदय स्तम्भित हो जाता है। मनुष्य शिवरूपको प्राप्त कर, संसारी हो वनके वेदान्त

निर्माणके सौन्दर्य, जीवनको श्रद्धशोभामय, शक्तिमय, आनन्द मधुर बनाकर "सर्व्वं खल्विदं ब्रह्म" महावाक्य सार्थक करे, यही अरविन्दकी साधनाका लक्ष्य है।

सातवां परिच्छेद

राजनीतिकक्षेत्र और अरविन्द।



आजकल राजनीतिक क्षेत्रमें भी एक प्रकारकी 'बनिअई' चल रही है। कितने ही लोग केवल नामके लिये ही स्वदेश-प्रेम करते हैं। धन और मान प्रतिष्ठाके लिये भी कितने ही लोग राजनीतिक आन्दोलनोंमें सम्मिलित होते हैं। पर यह किसीसे कहनेकी आवश्यकता नहीं, कि अरविन्द इस श्रेणीके स्वदेशी-प्रेमी नहीं हैं। एक प्रकारके और भी लोग देखनेमें आते हैं। इनकी प्रकृति निर्जीव होती है और चित्त अस्थिर रहता है। उनकी चिन्ता या कार्यकी कोई धारा नहीं रहती। वे अपने भविष्यके सम्बन्धमें सदा हताश रहते हैं। ऐसे लोग गवर्मेण्टकी हांमें हां मिलाना ही पसन्द करते हैं। अन्याय और अत्याचारके विरुद्ध खड़े होनेकी सामर्थ्य इनमें नहीं रहती।

देशमें नवीन जागृतिके प्रवाहित होनेपर भी कुछ लोग ऐसे हैं, जो उस ओर दृष्टिपात भी नहीं करते। किसी नवीन, कार्य्यकुशल और उत्साही नेताके अग्रसर होने पर ये लोग उसकी गणना ही नहीं करते। अपनी कार्य्यकारिणी शक्तिसे काम लेनेकी सामर्थ्य इनमें नहीं रहती। यह भी लोगोंसे कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अरविन्द इस श्रेणीमें भी नहीं है।

अरविन्दका विचार है, कि बड़ी बड़ी राजनीतिक सभाएं कर अंग्रेजोंके ढङ्गपर वक्तृता देनेसेही देशका उद्धार नहीं होगा। स्वदेश प्रेममें हृदयको सङ्कीर्ण रखनेसे काम नहीं चलता। वर्त्तमान राजनीतिमें जो अनुचित या सर्वसाधारणके लिये अनिष्टकर मालूम हो, उसके विरुद्ध, हृदयको दृढ कर, आवाज उठानी चाहिये। उस दशामें डरनेसे काम नहीं चलेगा। डरनेसे देशका कोई काम नहीं होता। सत्यके प्रकट करनेसे सरकारी कानूनका अपमान नहीं होता। इसी सम्बन्धमें उन्होंने कहा हैं —

"The fear of Law is for those who break the Law. Our aims are great and honourable, free from stain or reproach and our methods are peaceful, resolute and strenuous."

अर्थात् कानूनको तोड़नेवाले ही कानूनसे डरते हैं। हमलोगों का उद्देश्य महान् और साधु एवं अनिन्दित है। हमलोग स्थिरसङ्कल्प और उद्यमशील हैं। हम लोगोंकी कार्य्य प्रणाली शान्तिपूर्ण है।

मैंने इसको पुनर्जीवित करनेके जो प्रयत्न किया है, वह अत्यन्त अभिनव और अनुपम है। तुम्हारे हमारे जैसे हजारों आदमी यदि अपनी आत्माको जीवित कर सकें, तो उस आत्मा का सजीव हिल्लोल देशभरमें मलय स्पर्शके समान लगेगा और उस समय सजीव होना ही सक्रामक हो जायगा। जिसदिन यह इतनी बडी मृत् जाति अपनी दोनों आखोंसे अपने भीतर की दीनहीन दशा देखेगी, उसी दिनसे नयी सृष्टि का आरम्भ हो जायेगा। यह बात जिस तरह जातिके लिये सत्य है, प्रत्येक मनुष्यके लिये भी उसी तरह सत्य है। जबतक हमलोग अपने को छोटा और स्वार्थी बनाये रहते हैं, तबतक अपनेको नहीं देखते। घरको दस दिनतक छोड दिया जाये, तो उसमें धूल भर जाती है, मन्दिरमें नित्य पूजा नहीं होती, तो वह उद्दाम हो जाता है। आज हमलोगोंमेंसे प्रत्येकके मुखपर उदासी छायी हुई है।

इसीसे कहता हूं कि भाई अपने मनको जाग्रत करो। इस शव सदृश भारतमाताको कांधेपर लेकर वैरागी बने फिरनेसे कब तक काम चलेगा। इस पुराने सडे समाजको—आचार व्यवस्थारूप मृतकको—ज्ञानके विष्णुचक्रसे खण्ड-खण्डकर सभी दिशाओंमें फेंक दो। हमारी माता नवीन रूप धारणकर नयी शक्ति लेकर लौट आवेगी। नये देशमे, नयी मिट्टीमें, उस जन्मके स्वर्गमें, जहा जहा माताका अङ्ग पडेगा, वहा वहा एक-पवित्र तीर्थ हो जायगा। नूतनके वक्षस्थल पर पुरातन हो सफल जीवन

लेकर जीवित रहेगा। इस देशकी आत्माको ज्ञान, प्रेम और शक्तिके द्वारा सजीव बनाकर बाहरकी मायामें मत भूले रहो। कर्म्म क्षेत्रमें किसका आवाहन करोगे? जिसका मन, ज्ञान और शक्ति मृत प्राय हो रहो है, क्या वह तुम्हारा आवाहन सुन सकता है? *

नवां परिच्छेद।

अरविन्द बाबूके पत्र।



न् १९०८ ई० में ४८ नं० ग्रे स्ट्रीटमे अरविन्द का जो डेरा था, उसकी जब तलाशी हुई, तब ये तीनों पत्र वहीं मिले थे। अलीपुर बमकेशके समय ये पत्र अदालतमें भी पेश किये गये थे। विचार करते समय इन पत्रोंके कुछ अशों पर बहुत वादाविवाद हुआ था। इन पत्रोंके द्वारा गुप्त रूपसे जो बात अरविन्द अपनी स्त्रीसे कहना चाहते थे, उन बातोंसे उनके जीवनका सारा रहस्य प्रकट हो जाता है। जिस पत्रको बातको वह किसी पर प्रकट होने देना नहीं चाहते थे, वही उनकी मर्म्म कथा हैं, इसे कौन अस्वीकार कर सकता है? दैवयश आज वेही गोपनीय पत्र सर्व्वसाधारण

* बिजलीमें प्रकाशित एक लेखका अनुवाद।

की आखोंके सामने हैं। इन पत्रोंके सम्बन्धमें भिन्न भिन्न लोगों की भिन्न भिन्न राय होनेपर भी, निम्नलिखित दो चार बातोंसे उनका उद्देश्य भलीभाति मालूम हो जाता है।

"मैं जानता हू कि इस पतित जाति का उद्धार करनेकी शक्ति मेरे पावोंमें है, पर वह शारीरिक शक्ति नही है। मैं तलवार या बन्दूक लेकर युद्ध करनेके लिये नही जाता, ज्ञानके बलसे अपना कर्त्तव्य पालन करूंगा।"

उन्होंने समझा था, कि देशके हृदयमे जो अज्ञानतारूपी अन्धकार विद्यमान है, उसे ज्ञान दीपकको जलाकर ही दूर किया जासकता है। उनके इस विचारमें आज भी कुछ परिवर्त्तन नही हुआ है—अंगरेजी "आर्य्य" नामक पत्रमें वह बरावर वह वही एक ही बात कह रहे हैं।

अन्तमें बडे दु खके साथ कहना पडता है कि जिनके लिये ये तीनों पत्र लिखे गये थे वह अरविन्द बाबूकी धर्मपत्नी श्रीमती मृणालिनी देवी अब इस ससारमें नहीं हैं)।

(१)

30th August

प्रियतमा मृणालिनि,

तुम्हारा २४ अगस्तका पत्र मिला। तुम्हारे माता-पिताको फिर वही बीमारी हुई है, यह सुनकर दु खी हुआ। कौनसा लडका मर गया सो तुमने नहीं लिखा। दु ख होनेसे क्या होता है? संसारमें सुखकी खोजमें रहनेपर ही उसी सुखके भीतर दु ख

दिखाई देता है। "दुःख सर्व्वदा सुखके साथ रहता है", यह नियम केवल पुत्र कामनाके सम्बन्धमें ही नहीं है, सभी सांसारिक कामनाओंका फल यही है। मनुष्यके लिये एकमात्र उपाय यही है, कि वह धीरताके साथ सुख दुःख दोनोंको भगवानके चरणोंमें अर्पण कर दे।

मैंने बीस रुपयेके स्थानपर दस रुपये पढ़े थे, इसीसे दस रूपये भेजनेके लिये लिखा था; पन्द्रह रुपयेकी जब जरूरत है तो पन्द्रह रुपये ही भेजूंगा। इस महीनेमें सरोजिनीने तुम्हारे लिये दार्जिलिंगमें साड़ी खरीदी है, उसके रुपये भेजदिये हैं। मैं कैसे जान सकता हूँ, कि इधर बाजारका बहुत बकाया हो गया है। पन्द्रह रुपयेके लिये लिखा था वह भेज दिया। और तीन चार रुपये लगेंगे, उन्हें भी आगामी मासमें भेज दूंगा। अबसे तुम्हारे पास बीस रुपये भेजूंगा।

अब कामकी बात कहना हूँ। शायद इतने दिनोंमें अब तुम्हें मालूम हो गया होगा, कि जिसके साथ तुम्हारे भाग्यका सम्बन्ध है, वह बड़ा विचित्र मनुष्य है। आजकल इस देशके लोगोंका जैसा मानसिक भाव है, जीवनका उद्देश्य है, कर्म्म-क्षेत्र है, वैसा न तो मेरा भाव ही है और न उद्देश्य ही। मेरा कर्म्मक्षेत्र भी उन लोगोंसे भिन्न है। सभी विषयोंमें औरोंके साथ मेरी भिन्नता रहती है। मेरे भाव, उद्देश्य, कर्म्मक्षेत्र सभी असाधारण हैं। साधारण मनुष्य असाधारण विचार, असाधारण प्रयत्न और असाधारण उच्च आशासे जो

भाव समझते हैं, वह शायद तुमपर अविदित नहीं होंगे। इन सब भावोंको पहले तो लोग पागलपन कहते हैं पर यदि पागलको उनके कर्म्मक्षेत्रमें सफलता मिल जाये, तो उसको लोग पागल न कहकर प्रतिभावान् कहते हैं। पर कितने आदमियोंका ऐसा प्रयत्न सफल होता है? हजार आदमियोंमें दस आदमी असाधारण होते हैं, और इन दस आदमियोंमें एक आदमीको सफलता मिलती है। मेरे कर्मक्षेत्रमें सफलता मिलना तो दूर रहे, अच्छी तरहसे मैं उसमें अवतीर्ण भी नहीं हो सकता; ऐसी दशामें मुझे पागल ही समझना। पागलोंके हाथमें पड़ना स्त्रियोंके लिये बड़ा अशुभ है क्योंकि स्त्रियोंकी सारी आशायें सांसारिक सुख-दुःखमें ही आबद्ध रहती हैं। पागल अपनी स्त्रीको सुख नहीं, दुःख ही देता है।

हिन्दुधर्म्मके प्रवर्त्तकोंने यह समझा था, वे अपने असाधारण चरित्र, प्रयत्न और आशाको बहुत पसन्द करते थे, पागल या महापुरुषको तथा अलौकिक मनुष्योंको वे बहुत मानते थे, पर इससे स्त्रियोंकी जा दुर्दशा होती है, उसका क्या उपाय है? ऋषियोंने इसका उपाय किया था। उन्होंने स्त्री जातिसे कहा, तुम लोग "पति परमो गुरू" इसीको अपना मन्त्र समझना। स्त्री पतिकी सहधर्मिणी है। पति जिस कामको अपना धर्म्म समझे उसमें सहायता देना, सलाह देना, उत्साहित करना और उनको देवता समझना। पतिके सुखदुःखको अपना सुखदुःख समझना। कार्य्य निर्वाचन करनेका पुरुषोंको अधिकार है।

सहायता देना और उत्साहित करना, स्त्रियोंके अधिकारकी बात है।

इस समय प्रश्न यह है, कि तुम हिन्दूधर्मका पथ अवलम्बन करोगी या नवीन सभ्यधर्मका अवलम्बन करोगी? पागलके साथ जो तुम्हारा विवाह हुआ है, वह तुम्हारे पूर्वार्जित पापोंका फल है। अपने भाग्यके साथ एक बन्दोबस्त करना अच्छा होगा। वह बन्दोबस्त क्या है? पाँच आदमियोंकी तरह क्या तुम भी मेरी बातोंको पागलकी बातें समझ्कर यों ही हसीमें उड़ा दोगी? जो पागल है, वह तो अपने पागलपनके मार्गपर चलेगा ही। तुम उसको रोक नहीं सकती। तुम्हारी अपेक्षा उसोका स्वभाव बलवान है। ऐसी दशामें क्या एक कोनेमें बैठकर रोओगी या उसका साथ दोगी? क्या तुम उस पागलकी उपयुक्त पगली होनेकी कोशिश करोगी? जिस प्रकार धृतराष्ट्रकी महिषी अपनी दोनों आँखोंपर पट्टी बाँध कर स्वयं आजन्म अन्धी बनी रही उसी प्रकार क्या तुम भी पगली बननेके लिये तैयार हो? यद्यपि तुमने ब्राह्म स्कूलमें विद्याभ्यास किया है; पर आखिर तुम हिन्दूकी कन्या हो। हिन्दुओंके पूर्वपुरुषोंका रुधिर तुम्हारे शरीरमें विद्यमान है। मेरा विश्वास है, कि तुम अन्तिम पथका ही अवलम्बन करोगी।

मुझमें तीन पागलपन हैं। पहला पागलपन यह है, कि मेरा दृढ़ विश्वास है, कि भगवानने जो गुण, प्रतिभा उच्चशिक्षा विद्या और धन दिया है वह सब भगवानका ही है। जो परिवार

के भरणपोषणमें लगता है, उसीको अपने लिये खर्च करनेका अधिकार है। इससे जो बच जाये, वह भगवानको लौटा देना चाहिये। यदि मैं सब अपने लिये, अपने सुखके लिये और ऐश-आरामके लिये खर्च कर दूं, तो मैं चोर समझा जाऊँगा। हिन्दूशास्त्रका कहना है, कि जो भगवानसे धन प्राप्त कर भगवान को फिर लौटा नहीं देता, वह चोर है। अबतक तो मैं दो आना भगवानको देकर चौदह आना अपने सुखमें खर्चकर हिसाब पूरा कर देता था और सासारिक सुखमें भूला रहता था। इस प्रकार मेरे जीवनका आधा हिस्सा तो व्यर्थ ही चला गया। पशु भी अपने और अपने परिवारका उदरभरणकर कृतार्थ हो जाते हैं।

अब मुझे मालूम हुआ, कि इतने दिनोंसे मैं पशुवृत्ति तथा चौर्यवृत्तिका अवलम्बन कर रहा हूं। जबसे मुझे यह मालूम हुआ है, तबसे बड़ा दुखित हो रहा हूं और अपने ऊपर घृणा हो गयी है। अब ऐसा नहीं करूँगा। इस पापकार्यको मैंने सदाके लिये छोड़ दिया। भगवानको देनेका अर्थ है, धर्मकार्यमें व्यय करना। सरोजिनी और ऊमाको जो रुपये दिये हैं, उसके लिये दुःख नहीं है। परोपकार करना धर्म है, आश्रितकी रक्षा करना महाधर्म है, पर केवल भाईबहिनको देनेसे हिसाब साफ नहीं होता। इस दुर्दिनमें सभी देश हमारे द्वारपर आश्रितरूप से पड़ा है। हमारे तीस करोड़ भाईबहिन इस देशमें हैं। उनमें से अनेक भूखे मर रहे हैं, अधिकांश कष्ट और दुःखसे जर्जरित

होकर किसी प्रकार जीवित हैं, उनका हितसाधन करना होगा।

क्या कहती हो, इस विषयमें मेरी सहधर्मिणी बनोगी? केवल साधारण लोगों के समान खा पहन कर, जिसकी सचमुच बहुत आवश्यकता है, वही लेकर और सब भगवान को दूंगा। तुम यदि इसमें राय दो, त्याग स्वीकर करो, तो मेरी मनोकामना पूर्ण हो सकती है। तुमने एकबार कहा था 'मेरी कोई उन्नति नहीं हुई।" यह एक उन्नति का मार्ग दिखा दिया है। क्या इस मार्ग पर चलोगी?

मेरे शिर पर दूसरा पागलपन यह सवार है, कि चाहे जिस प्रकार हो, भगवान का साक्षात् दर्शन करना चाहिये। आज कल का धर्म है बात बात में भगवानका नाम लेना, सब के सामने दिखाने के लिये ईश्वर को प्रार्थना करना। क्या ऐसे लोग कभी धार्मिक हो सकते हैं? मैं ऐसा धार्मिक नहीं होना चाहता। यदि ईश्वर हैं, तो उनके अस्तित्व का अनुभव करने, उनके साथ साक्षात् करने का कोई न कोई मार्ग होगा ही। वह मार्ग चाहे जितना भी दुर्गम हो, मैंने उस मार्ग पर चलने का दृढ संकल्प कर लिया है। हिन्दूधर्म कहता है, कि अपने ही शरीर के मनमें वह मार्ग है। उस मार्गपर जाने के नियम दिखाई पड़े हैं, उन्हीं नियमों का पालन करना आरम्भ कर दिया है। एक मासके अनुभव से मालूम हुआ है, कि हिन्दूधर्म की वह बात मिथ्या नहीं है। जिन जिन चिन्हों की बात कही गयी है,

उन सबको में पा रहा हूं। इस समय मेरी इच्छा है, कि तुम भी उसी मार्ग पर चलो। इस मार्ग पर मेरे साथ तुम नहीं चल सकती, क्योंकि तुम में इतना ज्ञान नहीं है। पर मेरे पीछे पीछे आने में कोई रुकावट नहीं है। इस पथ पर चलने से सभी वासनाओं की सिद्धि हो सकती है, पर इस पथपर चलना, तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है। कोइ तुमको पकड़ कर जबर्दस्ती नहीं ले जा सकेगा। यदि तुम्हारी इच्छा होगी तो इस सम्बन्ध में मैं और भी बहुत कुछ लिखूंगा।

मेरा तीसरा पागलपन यह है, कि और लोग स्वदेशको एक जड़ पदार्थ समझते हैं। कुछ मैदान, खेत, वन, पर्वत, नदी आदि के समुदाय को ही ये अपना स्वदेश समझते हैं, पर मैं स्वदेश को माता समझता हूं। माता समझ कर ही उसकी भक्ति करता हूं, पूजा करता हूं। माता की छाती के ऊपर बैठ कर यदि एक राक्षस उनका रक्त पान करने को उद्यत हो, तो उस समय लड़का क्या करेगा? निश्चिन्तभाव से भोजन करने बैठेगा? स्त्री, पुत्रों के साथ उस समय आमोद-प्रमोद करेगा या माता का उद्धार करने के लिये दौड़ पड़ेगा? मैं जानता हूं, कि इस पतित जाति का उद्धार करने की शक्ति मेरे पावों में है, पर वह शारीरिक शक्ति नहीं है। तलवार या बन्दूक ले कर मैं युद्ध करना नहीं चाहता। मैं ज्ञानबल लेकर युद्ध भूमि में—कार्यक्षेत्र में—अवतीर्ण होना चाहता हूं। क्षात्रतेज ही एक मात्र तेज नहीं है। ब्रह्मतेज भी एक तेज है। ज्ञान के

ऊपर ही इस तेज की प्रतिष्ठा है। यह नूतन भाव नहीं है, आज कल का भाव नहीं है, इसी भाव को लेकर मैंने जन्म धारण किया था, यह भाव मेरे रोम रोम में मिल गया है। इसी महाव्रतका पालन करने के लिये भगवान ने मुझे इस पृथ्वी पर भेजा है। चौदह वर्ष की अवस्था में वह बीज अंकुरित होने लगा था, अठारह वर्ष की अवस्था में उसका मूल दृढ़ और अचल हो गया था। घटनावश तुमने एक बार कहा था, कि मैं मालूम कहां के दुष्ट आकर मेरे सरल सज्जन पति को कुपथ की ओर ले जा रहे हैं। पर तुम्हें जानना चाहिये कि तुम्हारे यह सरल सज्जन पति ही उन लोगोंको तथा अन्यान्य सैकड़ों लोगोंको उस पथ पर चाहे वह पथ बुरा हो या भला—खींच लाये थे और भी हजारों आदमियोंको खींच लावेंगे। यह मैं नहीं कहता, कि मेरी जीवितावस्थामें ही कार्य्य सिद्ध हो जायगा, पर कार्य्य सिद्ध हो जायेगा यह निश्चय है।

मैं जानना चाहता हूं कि इस विषय में तुम क्या करना चाहती हो ? स्त्री पति की शक्ति है। तुम ऊषा की शिष्या हो कर साहेबोंकी पूजा करोगी ? उदासीन होकर स्वामीकी शक्तिको नष्ट करोगी या सहानुभूति दिखा कर पतिका उत्साह दूना करोगी ? तुम कहोगी, कि ऐसे महान कामों में मेरे जैसी साधारण स्त्री क्या कर सकती है, मेरे मनमें बल नहीं है, बुद्धि नहीं है, इन बातों के सोचने में भय मालूम होता है। इसका एक सहज उपाय है। भगवानका आश्रय लो, एकबार ईश्वर प्राप्ति के

मार्ग ग्रहण कर लो। तुम में जो कुछ अभाव हैं, उन सब को भगवान शीघ्र पूर्ण कर देंगे। जो भगवान का आश्रय लेता है उसके पास भय फटकने भी नहीं पाता। और यदि तुम मेरे ऊपर विश्वास करो, दस लोगों की दस तरह की बातों में न पड़ कर, मेरी ही बातें सुनो, तो मैं तुम को अपना ही बल दे सकता हूं। इससे मेरे बल की हानि नहीं, वृद्धि ही होगी। मैं कहता हू, कि स्त्री स्वामी की शक्ति है अर्थात् स्वामी स्त्री में अपनी प्रति मूर्त्ति देख कर, उसकी महती आकांक्षा की प्रतिध्वनि पा कर, दूनी शक्ति पाता है।

क्या सदा इसी तरह रहोगी? अच्छा कपड़ा पहनना, अच्छा भोजन करना, हसना, नाचना या अन्यान्य सुख सम्भोग करना यह मानसिक उन्नतिका लक्षण नहीं है। आजकल हमारे देशकी महिलाओंके जीवनने अत्यन्त संकीर्ण और हेय आकार धारण कर लिया है। तुम यह सब छोड़कर मेरे साथ चली आओ। हम लोग भगवानका जो काम करने आये हैं, उसीको आरम्भ करें।

तुममें एक बड़ा भारी दोष है। वह यह, कि तुम बड़ी सीधी हो। जो कोई कुछ भी कहता है, वही सुनती हो। इससे सदा मन चञ्चल रहता है, बुद्धिका विकाश नहीं होता, किसी काममें एकाग्रता नहीं होती। इसको सुधारना होगा। एक ही आदमीकी बात मानकर ज्ञान सञ्चय करना होगा। एक लक्ष्य रखकर अविचलित चित्तसे कार्यमें सफलता प्राप्त करनी होगी।

लोगोंकी निन्दा और हंसीको तुच्छ समझकर ईश्वरमें दृढ भक्ति रखनी होगी।

तुममें एक दोष और है, वह तुम्हारे स्वभावका दोष नहीं है, समयका दोष है। बङ्गालमें ऐसा समय ही आया है। संसारके लोग गम्भीर बातोंको गम्भीरभावसे नहीं सुन सकते। धर्म, परोपकार, महात्वाकाक्षा, महत्प्रयत्न, देशोद्धार प्रभृति जो गम्भीर है, जो उच्च और महान हैं, उन सबको देखकर लोग हंसी दिल्लगी किया करते हैं। सबको दिल्लगीमें उडा देना चाहते हैं। ब्राह्मस्कूलमें रहनेसे तुममें भी कुछ कुछ यह दोष आ गया है, बारीन्द्रमें भी यह दोष था। थोडा बहुत हम सब लोग इस दोषसे दूषित थे। देवघरके लोगोंमें तो इस दोषकी आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। अपने मनसे इस भावके दृढताको साथ दूर कर देना चाहिये और यदि तुम चाहो, तो सहजमें यह दोष दूर कर सकती हो। एकबार सोचने विचारनेका अभ्यास करो तो तुम्हारे असली स्वभावका पूर्ण विकाश हो जायगा। परोपकार और स्वार्थत्यागकी ओर तुम्हारा ध्यान है, केवल मानसिक शक्तिका अभाव है। ईश्वरकी उपासना करनेसे वह शक्ति तुम्हें मिल जायगी।

यही मेरी वह गुप्त बात थी। किसी पर इन सब बातोंको प्रकट न कर, अपने आप धीरताके साथ इन सब बातों पर विचार करो। इसमें डरनेकी कोई बात नहीं है, पर सोचनेकी बहुत सी बातें हैं। पहले और

कुछ नहीं करना होगा, केवल प्रतिदिन आध घण्टा भगवान का ध्यान करना चाहिये। उनके सामने प्रार्थनाके रूपमें अपनी बलवती इच्छा प्रकट करनी चाहिये। धीरे धीरे मन सबल होजायगा। उनसे सदा यही प्रार्थना करना, कि मैं जिसमें स्वामीके जीवनके उद्देश्य और ईश्वर-प्राप्तिके मार्गमें रुकावट न डालकर सदा सहायिका बनूं साधनभूत बनूं। क्या यह तुम करोगी। ?

तुम्हारा—

(२)

23 Scott's Lane
Calcutta
17th February 1909

प्रिय मृणालिनि !

बहुत दिनोंसे तुम्हारे पास पत्र नहीं लिखा है, यह मेरा पुराना अपराध है। यदि तुम अपनी उदारतासे मेरे इस अपराधको क्षमा नहीं करोगी तो मेरे लिये दूसरा उपाय ही क्या है? जो आदत बहुत पुरानी पड जाती है, वह एक दो दिनमें नहीं छूटती। मालूम होता है कि अपनी इस आदतके छोडनेमें मेरा यह सारा जीवन लग जायगा।

८ वीं जनवरीको आनेकी बात थी पर नहीं आ सका। जान बूझकर ऐसा नहीं किया। जहां भगवान ले गये वहीं जाना पडा। इस बार मैं अपने कामसे नहीं गया था। उन्हींके काममें गया था। इस बार मेरे म

हो गयी है। इसके सम्बन्धमें अपने इस पत्रमें नहीं लिखूंगा। तुम यहां आओगी, तो मुझे जो कुछ कहना है, कहूंगा। केवल यही इतना कह देता हूं, कि अब मैं अपनी इच्छाके आधीन नहीं हूं। जहां भगवान मुझे ले जायगे, वहीं कठपुतलीकी तरह मुझे जाना पडेगा। जो करावेंगे, वहीं कठपुतलीकी तरह करना पडेगा। इस समय मेरी इस बातका अर्थ समझनेमें तुम्हें कठिनता होगी, पर कहना आवश्यक है, नहीं तो तुम्हें दुःख होगा। तुम समझोगी, कि मैं तुम्हारी उपेक्षा करके कोई काम करता हूं, पर ऐसी बात नहीं है। अबतक मैंने तुम्हारे सामने अनेक अपराध किये हैं, उन अपराधों पर तुम्हारा असन्तुष्ट होना भी स्वाभाविक था, पर इस समय अब मेरी स्वाधीनता नहीं है। अबसे तुम्हें समझना चाहिये, कि मेरे सब काम मेरी इच्छाके ऊपर निर्भर नहीं है। भगवानके आदेशसे ही वे काम हो सकते हैं। जब तुम यहां आओगी, तब मेरे तात्पर्यको हृदयङ्गम कर सकोगी। आशा है, कि भगवानने अपनी करुणाका जो आलोक मुझे दिखाया है, तुम्हें भी दिखलावेंगे। परन्तु यह उन्हींकी इच्छा पर निर्भर है। तुम यदि मेरी सहधर्मिणी होना चाहती हो तो प्राणप्रणसे चेष्टा करो, जिससे वे तुम्हारी प्रबल इच्छाके बलसे तुमको भी करुणाका मार्ग दिखावें। यह पत्र किसीको भी मत दिखाना। गोपनीय है। तुम्हारे सिवाय और किसीसे नहीं कहा है। दूसरेसे कहनेके लिये मना है। आज इतना ही।

तुम्हारा ...

पुनश्च :—घर गृहस्थीके सम्बन्धमें सरोजिनीके पास लिख दिया है। अलग तुम्हारे पास लिखनेकी आवश्यकता नहीं। उसी पत्रसे सब हाल समझना।

तृतीय पत्र।

6th, December 1909

प्रिय मृणालिनि,

परसों मुझे चिट्ठी मिली थी, उसी दिन रेपड भी भेजा गया था, मालूम नहीं वह अबतक क्यों नहीं मिला।

* * * *

यहाँ मुझे एक मुहूर्त्त भी समय नहीं मिलता। लिखनेका भार मेरे ऊपर है; कांग्रेस सम्बन्धी सभी कामोंका भार मेरे ऊपर है। "वन्देमातरम्" की गड़बड़ी मिटानेका भार भी मेरे ऊपर है। मुझसे सँभरता नहीं। इसके अलावा मेरे अपने भी काम है, जिन्हें मैं छोड नहीं सकता।

क्या तुम मेरी एक बात मानोगी? इस समय मैं बड़ी चिन्तामें पड गया हू, चारो ओरसे जो खींचातानी हो रही है, उससे पागल हो जानेकी सम्भावना है। इस समय यदि तुम स्थिर नहीं रहोगी, तो मेरी चिन्ता और दुर्भावना और अधिक बढ जायगी। तुम उत्साह और सान्त्वनापूर्ण पत्र लिखोगी, तो मुझे बहुत शक्ति मिलेगी। प्रसन्नताके साथ सभी विपदाओं और भयको अतिक्रम कर सकूगा। यह मैं जानता हू, कि देवघरमें अकेले रहनेसे तुम्हें कष्ट हो रहा है, पर यदि तुम अपने मनको

दृढ़ कर लो, और विश्वासके ऊपर निर्भर रहो, तो मनके ऊपर दुःख अपना उतना आधिपत्य नहीं जमा सकता। जब मेरे साथ तुम्हारा विवाह हुआ है तब तुम्हारे लिये यह दुःख अनिवार्य है। बीच बीचमें वियोग होगा ही; क्योंकि साधारण बंगालीकी तरह, परिवार या स्वजनोंका सुख पाना मेरे जीवनका मुख्य उद्देश्य नहीं है। ऐसी अवस्थामें मेरा धर्म्म ही तुम्हारा धर्म्म है। मेरे निर्दिष्ट कर्म्मको सफलताको यदि तुम अपना दुःख नहीं समझोगी, तो तुम्हारे लिये सुखी रहनेका कोई दूसरा उपाय नहीं है। एक बात और है। जिन लोगोंके साथ तुम इस समय रहती हो, उनमें अधिकांश हमलोगोंके गुरुजन हैं। वे यदि कड़ी बातें कहें, कोई अनुचित बात उनलोगोंके मुखसे निकल जाय, तो तुम उनके ऊपर क्रोधित मत होना और ऐसा न समझना, कि वे लोग जो कुछ कहते हैं, वह सब हृदयसे कह रहे हैं और तुम्हें दुःख देनेके लिये ही कह रहे हैं। प्राय ऐसा हो जाता है कि बिना क्रोधित हुए भी कोई कड़ी बात मुँहसे निकल जाती है। उन बातोंपर ख्याल करना उचित नहीं। यदि किसी प्रकार भी वहां तुम न रह सको, तो जबतक मैं कांग्रेसके कामोंमें फँसा हूं, तबतक तुम्हारे लिये कोई दूसरा उपाय करदूंगा

मैं आज मेदिनीपुर जाऊँगा। वहांसे लौटनेपर और यहांका सब प्रबन्ध करके मैं सूरत जाऊँगा। सम्भवत 15th or 16th को ही जाऊँगा। २री जनवरीको लौट आऊँगा।

तुम्हारा—

यके प्रति किया है, इसका सच्चा मर्म क्या है। काम क्रोधादि षडरिपुओं पर विजय प्राप्त करनी, फल पाने की इच्छा न रखते हुए काम करते जाना, अपनी इच्छाओं का दमन करते हुए सच्चे हृदयसे ईश्वरकी भक्ति करनी, उच्चाधमके लिये हृदयमें बराबर प्रेम रखना इत्यादि गीताके उपदेशका व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना मैंने अपने जीवनका एकमात्र लक्ष्य बनाया, उसी समयसे मुझे हिन्दू धर्मके तत्वोंके अर्थका पूर्ण ज्ञान हुआ है। हम लोग प्राय हिन्दू धर्मको सनातन धर्मके नामसे पुकारा करते है, किन्तु हममेंसे बहुत हो थोडे इस 'सनातन धर्म'के विषयमें अच्छी जानकारी रखते हैं। संसारके सभी अन्यधर्म विश्वासके आधार पर अवलम्बित सम्प्रदाय मात्र हैं, किन्तु सनातन धर्मके लिये यह बात लागू नही है। सनातन धर्म ही जीवन है। इस धर्मके सिद्धान्तोंकी भित्ति केवल विश्वास पर ही नहीं निर्भर करती, बल्कि इसका जीवनके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। सनातन धर्म वह धर्म है जिसका मनन मानव जातिके कल्याणके निमित्त हमारे प्राचीन महर्षिओंने पवित्रमय भारत खण्डमें किया है। यह वही धर्म है, जिसके जन्मस्थानके गौरवको प्राप्त कर आज भी भारतका मुख उज्ज्वल रह सका है। भारतवर्ष अन्यदेशोंकी नाई अपनी उन्नति इसलिये नही करता, कि वह निर्बल तथा निःसहायको पैरों तले कुचलनेका सुअवसर प्राप्त करे, बल्कि इसलिये करता हैं, कि वह समस्त संसारमें अपनी अनादि ज्योतिमय शक्तिका प्रसार कर सके। भारतका जीवन निज स्वार्थके

"तुम्हें अपने कारावासके समयमें जिस हिन्दूधर्मके कुछ सिद्धान्तोंकी सत्यताके विषयमें ज्ञान प्राप्त हुआ है उसी धर्मकी उन्नतिमें संसारके सामने किया चाहता हूँ। यह वही धर्म है, जिसकी वृद्धि और पुष्टि मैंने अवतारों तथा ऋषियोंके द्वारा कराई है। इसी धर्मके द्वारा राष्ट्रोत्थानका कार्य्य सफल होना सम्भव है। मैं इस राष्ट्रका उत्थान इसलिये किया चाहता हूँ,कि यह राष्ट्र मेरा सन्देशा लेकर संसारके अन्यान्य भागोंमें प्रचार करे। यह वही सनातन धर्म है जिसकी सत्यताका ज्ञान तुम्हें अच्छी प्रकार न था। यह वही अनादिधर्म है जिसकी सूचना मैंने तुम्हें दी है। मैंने आन्तरिक तथा बाह्य संसारके पदार्थोंके प्रत्यक्ष प्रमाणों द्वारा तुम्हारे हृदयके भौतिकता तथा नास्तिकता रूपी अज्ञानान्धकार को हटाकर तुम्हें यथोचित सन्तोष दिया है। जिस समय तुम यहा से बाहर जाना, अपने राष्ट्रके कानोंतक इस ममका सन्देशा सुनाना कि राष्ट्रका जीवन केवल धर्मके लिये ही हुआ करता है। इस बातपर तुम अधिक जोर देना, कि राष्ट्रका जीवन केवल अपने स्वार्थके लिये नहीं, बल्कि समस्त संसारकी हितकामनाके लिये ही हुआ करता है। "विश्व ब्रह्माण्डकी सेवाके लिये मैं राष्ट्रोंको स्वतन्त्रता दिया करता हूं" यही ईश्वरका दूसरा सन्देशा है।"

भारतोत्थान सनातनधर्मोत्थानका केवल प्रतिशब्द मात्र है। "भारत महान् होगा" इसका अर्थ है, कि सनातनधर्मकी वृद्धि होगी। जिस समय यह कहा जाता है, कि भारतवर्ष संसारके अन्य प्रदे-

शोंपर साम्राज्य स्थापित करेगा तो इसका यही अर्थ होता है कि सनातनधर्म संसारके सभी प्रदेशोंमें विस्तार प्राप्त करेगा। भारतवर्ष धर्मके बलसे केवल धर्मके लिये ही जन्म ग्रहणकर अबतक जीवित है। धर्म प्रचारका अर्थ प्रादेशिक विस्तारका सूचकमात्र है। परमात्माने फिर भी कहा "मैंने तुम्हें दिखलाया है, कि मैं सर्वत्र ही विराजमान हू। मैं ही सब जीवोंमें और सब वस्तुओंमें विराजमान हू। मैं केवल उनके ही भीतर कार्य नहीं कर रहा हू जो जातीय उन्नतिके लिये इस आन्दोलनमें भाग ले भारत माताकी वेदीपर प्राण अर्पण कर रहे हैं वरन् उनके भीतर भी मैं ही विद्यमान हू, जो इसआन्दोलनके प्रतिघातक स्वरूप खडे होकर देशद्रोहिताका परिचय दे रहे हैं। विश्वजगतके सभी जीवोंमें मैं विद्यमान हू। मनुष्य इस संसारमें जाकुछ सोचते अथवा करते हैं, वह सब केवल मेरे उद्देश्यमेंयोग देना मात्र समझना चाहिये। इसलिये जो लोग इस आन्दोलनका विरोध कर रहे हैं, वे भी मेरा ही कार्य करतेहैं। वे हमारे शत्रु नहीं वरिक कार्य्ययन्त्र हैं। अपने सभी कार्य्यों में तुम अग्रसर होते चले जा रहे हो, किन्तु तुम यह नहीं जानते कि किधर अग्रसर हो रहे हो। कभी कभी इस प्रकारकी बातें हो जाया करती हैं, कि तुम चाहते करना कुछ किन्तु वस्तुत हो जाया करता है कुछ और ही। तुम किसी एक लक्ष्यको सामने रख कार्य्यारम्भ कर देते हो, किन्तु अन्ततोगत्वा तुम किसी और ही लक्ष्यपर आ पहु चते हो। विश्वमें चारों ओर केवल शक्तिका ही राज्य है। शक्ति मनुष्यके भीतर प्रवेश कर

कार्य्य करनेके लिये वाधित करती है। बहुत दिनोंसे मैं राष्ट्रके उन्नति पथका निर्माण कर रहा था। इसके लिये आज शुभलग्न आ उपस्थित हुआ है। और मैं इसमें सफलता प्रदान कराऊँगा।"

आपकी संस्थाका नाम "धर्मरक्षा समाज" है। ठीक ही है। हिन्दूधर्मकी रक्षा तथा उत्थान कार्य्य ही हमारे सामने उपस्थित है। किन्तु हिन्दू धर्म कहते किसे हैं? वह कौनसा धर्म है जिसे हम सनातन, अनादिके नामसे पुकारते हैं। सनातन धर्म ही हिन्दू धर्म है, क्योंकि इसकी रक्षा हिन्दुओंने ही की है। इसका प्रादुर्भाव सर्व प्रथम हिमाचल और सागरके बीच प्राचीन पवित्र तथा शान्तिमय आर्य्यावर्तमें हुआ है तथा इसका संरक्षण भार सदासे आर्य्य जाति पर ही निर्भर रहा है। सनातन धर्म वह धर्म नहीं है, जिसका प्रचार संसारके केवल किसी एक देशमें सीमा बद्ध रहे। जिस धर्मको हम लोग 'हिन्दू धर्म'के नामसे पुकारा करते हैं, वह वास्तवमें सनातन तथा अनादि है, क्योंकि प्रचलित अथवा अप्रचलित सभी धर्मोंके मुख्य मुख्य सिद्धान्तोंको इसने अपने अन्तर्गत रख छोडा है।

जो धर्म विश्वव्यापी नहीं है, उसको अनादि नहीं कह सकते। वह धर्म जिसका क्षेत्र अत्यन्त ही संकीर्ण तथा साम्प्रदायिक है, बहुत दिनों तक जीवित नहीं रह सकता। यही एक धर्म है, जो दर्शन शास्त्रके सिद्धान्तों तथा वैज्ञानिक आविष्कारोंके समेत भौतिक संसारपर आधिपत्य जमानेकी योग्यता रखता है। यही एक धर्म है, जो परमात्माके निकट पहुंचनेका दृढ़ उपदेश करता

है तथा उनके निकट पहुचनेके सभी सम्भवनीय मार्गोंका अवलोकन करानेकी शक्ति रखता है। यही धर्म है। जिसके एक सिद्धान्त (अर्थात् परमात्मा सभी जीवोंमें विद्यमान है और उसी के द्वारा विश्वकी सचालना हो रही है) पर ससारके सभी धर्मोंका मतैक्य है। यही वह धर्म है, जो हम लोगोंको केवल इसी योग्य नहीं बनाता, कि हम लोग सत्य विषयक ज्ञान अथवा विश्वास प्राप्त कर सकें, बल्कि हमें यह उस योग्यताके पद पर प्रतिष्ठित कर देता है, जहांसे हम उसका सच्चा अनुभव प्राप्त कर सकते हे। यही वह धर्म है जो ससारके प्रकृत स्वरूप का जीवनमय चित्र मनुष्यके हृदय पटल पर अंकित करता है। यही वह धर्म है जो हमें ईश्वरीय लीलाका सच्चा पाठ पढाते हुए हमें उस लीलाके अन्तर्गत रहकर इसके उत्कृष्ट नियमों तथा सूक्ष्म तत्वोंको समझनेका प्रकृत मार्ग दर्शाता है। यही वह धर्म है, जो जीवनकी छोटीसे छोटी बातोंको भी धार्मिक सिद्धान्तोंसे पृथक नहीं मानता और जो यह जानता है, कि अमरत्व क्या है। यही वह धर्म है जिसने मृत्युकी सत्यताको अकाट्य रूपसे खण्डन करते हुए जीवनके सारका सच्चा उपदेश किया है।

इन्हीं शब्दोंको परमात्माने आपसे निवेदन करनेकी आज्ञा मुझे दी थी। जो कुछ मैं अपनी ओरसे कहना चाहता था वे बातें हमसे इस समय कोसों दूर हैं और जो कुछ मुझे कहनेके लिये कहा गया था उससे अधिक मुझे कहना भी नहीं है।

यही दो एक शब्द मेरे भीतर रत्त छोड़े गये थे, जिसे मैं आपके सामने निवेदन कर चुका। अब मेरा कार्य समाप्त हो गया। मैंने इसी प्रकार एकबार और कहा था और उस समय भी मेरा यही कहना था, कि यह आन्दोलन राजनैतिक नहीं और राष्ट्रीयता राजनीति नहीं बल्कि धर्म है—सम्प्रदाय है। मैं उन्हीं अपनी पहली बातोंको फिर दोहराता हू, किन्तु केवल कहनेकी प्रणालीमें विभिन्नता है। अब मैं यह नहीं कहता कि जातीयता एक सम्प्रदाय अथवा धर्म है, मैं यह कहता हू कि यह सनातन धर्म ही हमलोगोंके लिये राष्ट्रीयता है। हिन्दूजाति सनातन धर्मको ही लेकर जन्मी है और इसकी उन्नति इसी धर्मकी उन्नतिपर निर्भर करती है। जिस समय सनातन धर्म अवनत अवस्थामें पहुचता है, उस समय हिन्दू जाति भी अवनतिके गढ़े में गिर जाती है और यदि सनातन धर्मका ध्वस सम्भव हो, तो इस सनातनधर्मके नाशके साथही यह नाश हो जायगी। सनातन धर्म ही राष्ट्रीयता है—मैं आपको यही सन्देश सुनाता हू।

परमात्माने हमारे हृदय में हिन्दूधर्म के सच्चे सिद्धान्तों के विचित्र ज्ञान का सञ्चार किया है। जेल के कर्मचारियों के हृदय में सहानुभूति का समावेश हुआ और उन्होंने मुझे दो एक घण्टे स्वच्छ हवा में टहलने की आज्ञा देनेके निमित्त वहांके एक अंग्रेज अधिकारी से प्रार्थना की। ईश्वर की कृपा से उनकी प्रार्थना पर विचार किया गया और हमें कैद कोठरीसे निकल कर वायु

सेवन की अनुमति मिल गयी। एक दिन टहल रहा था। टहलते टहलते मैंने हृदय में कुछ अमानुषिक वलका अनुभव किया। ऐसा ज्ञात हुआ, कि अब मैं जेलकी चहार दीवारियोंसे परिवेष्ठित नहीं हूँ। बल्कि मुझे स्वयं वासुदेव जी घेरे हुए हैं। सामनेके वृक्ष को देखनेसे जान पड़ा कि मानो स्वय श्री कृष्ण भगवान ही खड़े हों। दीवारों की चारों ओर काटेदार छड़ों में भी मैंने उसी अपने प्यारे गोपालको विराजते हुऐ देखा। जिस समय मैं वहाके चौकीदारोंकी ओर दृष्टिपात करता तो, ज्ञात होता मानों स्वय नारायण खड़े खड़े हमारी रक्षा करने को उद्यत हों। जिस समय मैं अपनी उसी छोटी सी कोठरी में शय्या पर लेटता तो जान पड़ता मानो स्वय दीनबन्धु अपनी गोद मे ले मुझे चुचुकार रहे हों। जहा कहीं भी मे अपनी नजर फेरता, केवल कृष्ण ही कृष्ण दिखलाई पडते थे। जिस समय मैं जेल के दण्डित चोरों और डाकुओंकी ओर दृष्टिपात करता, उनको अन्धकारमय आत्मामें भी कृष्ण ही दृष्टि गोचर होते थे। उनमें एकको मैंने देखा जो देखनेमें एक पुण्यात्मा जैसा लगता था। किन्तु डकैतीके अभियोगमें दस वर्षके लिए कड़ी कैद के दण्ड को भोग रहा था। एक दूसरा जिसे हम लोग अपने देश में वडे ही घमण्ड में आकर 'छोटा लोग' कह कर सम्बोधित किया करते हैं, उसी हालत में पड़ा अपने शरीर को गला रहा था। एकाएक भीतर से आवाज आई। "जिन मनुष्यों के बीच मैंने तुम्हे भेजा है, उन्हें खूब गौरसे देखो। तुम यह

जाननेका यत्न करो कि राष्ट्रीय उत्थान किस प्रकार तथा किस लिये हुआ करता है"।

जिस समय हम लोग न्यायाधीशके सामने ले आये गए मेरे हृदयमें फिर भी वही बात आने लगी। भीतर की आवाज ने पूछा "पकड़ कर जेलमें रखे जानेके समय क्या तुम्हारा मन हतोत्साह सा नहीं हो गया था। क्या तुमने हमसे यह प्रश्न नहीं किया था, कि हमारी रक्षा क्यों नहीं करते। तो उसका उत्तर क्यों नहीं लेते। देखो ध्यानपूर्वक न्यायाधीश की ओर एक बार दृष्टिपात तो करो सही"। उस समय मैंने क्या देखा मानो श्री कृष्ण बैठे हुए मुस्कुरा कर पूछते हैं, कि कहो तो अरविन्द अब भी तुम्हारी आत्मामें डर विद्यमान है। उन्होंने फिर भी कहा—'मैं स्वयं सभी जीवोंमें वर्त्तमान हूँ तथा जीवधारियों के सभी कार्य्योंका शासन मैं ही किया करता हूँ। तुम्हारी रक्षाका भार मुझ पर है, इस लिये भयभीत होनेकी कोई भी आवश्यकता नहीं है। जिस अभियोग में तुम बन्दी किये गये हो उसके मार्जनका भार हमारे ऊपर रख छोडो। तुम्हें कारागारमें प्रवेश करा कर तुम्हारी कष्ट परीक्षा लेना हमारा कभी भी उद्देश्य नहीं है। यहां पर तुम्हें लानेका हमारा कुछ भिन्न ही उद्देश्य है। इसी अभियोग कार्य्यके द्वारा मैं निज कार्य्य साधन करूंगा।" अस्तव्य अभियोगके मार्जनके निमित्त मैंने जब लेखनी उठाई तो एक विस्मयान्वित घटना सगठित हुई जिसकी आशा मैंने स्वप्नमें भी नहीं की थी। जो कुछ प्रबन्ध

इसके पूर्व हुआ था वह सब अस्तव्यस्त हो गया, क्योंकि वहा पर मेरे एक पुराने मित्र पहुँच गए, जिनके विषयमें मैंने तनिक भी विचार नहीं किया था कि वह आ पहुँचेंगे। आपमें से प्राय सभी लोग उनके नामसे अवश्य ही परिचित होंगे। जिन्होंने अपना सर्वस्व त्याग जीतोड परिश्रम कर अपना स्वास्थ्य बेचकर भी हमारी रक्षा करनेका यत्न किया था उनका नाम है श्रीचितरञ्जनदास। उन्हें देखकर मुझे आनन्द तो अवश्य हुआ, किन्तु तो भी मैंने अपनी लेखनी रोकना आवश्यक नहीं समझा। इतनेमें एक आवाज भीतरसे उठी "यही पुरुष तुम्हारी रक्षा उन जालोंसे करेगा, जिसमें तुम फंसा लिए गये हो। इन कागज पर्णोंको तुम रद्दी कागजकी टोकरीमें रख छोडो। तुम्हें उन्हें कुछ सलाह देनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं अपनी सलाह उन्हें स्वयं देता हूँ"। उसी समयसे मैं चुप रहा, किन्तु जब कभी भी प्रश्न का उत्तर देता तो मामलेके कार्य्यमें लाभकारी होते नहीं देखता। इसलिये इस मामलेको मैंने उन्हींके हाथों पूर्णरूपसे सौंप दिया। मैं बारबार अपने भीतरकी आवाज सुना करता कि "भयभीत न हो, मैं ही तुम्हारा स्वयँ पथप्रदर्शक हूँ। उन्हीं विषयोंके विचारमें तुम अपना अधिकतर समय व्यतीत करो, जिसके लिये मैं तुम्हें यहां लाया हूँ। जब तुम जेलके बाहर निकलना तो कभी भी न्यायसंगत कार्य्य करने में न हिचिकना तथा भयको कभी भी अपने पास फटकने नहीं देना। सदा मनमें इस बातका स्मरण करते रहना, कि किसी भी

कार्य्यको पुरुष विशेष नहीं किया करता। तुम्हारे कर्त्तव्य मार्ग में चाहे कितनी ही विपत्तियां क्यों न आ उपस्थित हों, कर्त्तव्य-पालनसे मुख नहीं मोडना। राष्ट्रके भीतर मैं वास करता हूँ, इसलिये इसके उत्थानका भार मेरे ऊपर है। मैं नारायण वासुदेव हूँ, और जो कुछ मैं चाहता हूँ वही अवश्य होता है। मनुष्येच्छित कार्य्य कभी भी मेरी सहायताके विना सम्पन्न नहीं हुआ करते। मैं संसारकी गति में कौन कौन सा परिवर्त्तन करना चाहता हूँ इसे कोई भी नहीं जानता और अगर जाने भी तो इसमें संसारकी कोई दूसरी शक्ति बाधा उपस्थित करनेमें समर्थ नहीं हो सकती।"

अब मैं अपने एकान्त स्थानसे बरी किया गया हूं और उन्हींके बीच रख छोड़ा गया हूं, जिनके मत्थे भी इसी अभियोगकी टीका लगायी गयी थी। आप लोगोंने आज मेरे आत्म-त्याग तथा देश प्रेमके विषयमें बहुत कुछ कह डाला है और जबसे मैं जेलसे लौटा हूं अपनी प्रशंसा विषयक व्याख्यानोंको श्रवण करते करते उकता सा गया हूं और ऐसा करते समय कुछ वेदनाका भी अनुभव करता हूं। इसका कारण यह है, कि मैं अपने दोष तथा त्रुटियोंसे अच्छी प्रकार अवगत हूं। इसके पहले भी अपनी त्रुटिओंसे अनभिज्ञ नहीं था। जेलमें जब सबोंने मिलकर मुझे दबाया तो मुझे कुछ ग्लानि हुई। मैंने उसी समय जान लिया कि यह शरीर दोषपूर्ण निर्बल यंत्र मात्र

है, जिसको सबलता चरित्र बलपर ही अवलम्बित है। उस समय मैंने अपनेको एक ऐसे गरोहमें पाया, जिनमेंसे कितनोंके चरित्रबल और साहसकी तुलना करनेपर मैं उनके सामने तृणके बराबर भी नहीं ठहर सकता हूं। कितनोंको मैंने केवल शारीरिक और चरित्रबल ही में श्रेष्ठ नहीं पाया बल्कि वे मेरे एकमात्र अहङ्कारका कारण मानसिक ज्ञानकी भी योग्यतामें मुझसे कहीं बढ़े चढ़े थे। भीतरकी आवाजने कहा—"यह नवयुगका समय है, जिसमें राष्ट्रोंकी उन्नति एकमात्र हमारे आदेशसे हो रही है। नवयुवकोंकी संख्या इतनी अधिक है, कि भयको हृदयमें स्थान देनेको कोई भी आवश्यकता नहीं है। अगर अपनेको तुम अलग करके विश्राम भी करने लगो, तो तुम्हारा कार्य अब रुकनेका नहीं। अगर तुम किसी प्रकारसे जुदा भी कर दिये जावो तो येही नवयुवक तुम्हारे स्थानको ग्रहण कर अधिक उत्साहसे कार्य सम्पन्न करेंगे। तुममें केवल एक यही शक्ति है, कि तुम इस सन्देशेको इस राष्ट्रके कानोंतक पहुचा दो, जिसके द्वारा इसकी उन्नति हो सके। दूसरी बात जो है वह यही है, जिसे परमात्माने मुझसे कहा है।

इसके बाद मैं एक एकान्त छोटी सी कोठरीमें लाया गया और वहा जो आश्चर्य घटना हुई उसे मैं वर्णन करनेमें अपनेको असमर्थ पाता हू, किन्तु इतना कहे बिना नहीं रह सकता कि ईश्वरीय विचित्र घटनाओंका अवलोकन करते २ मुझे हिन्दू धर्मकी पूर्ण सत्यताका अनुभव होने लगा। मेरे मनमें

कई प्रकारकी शङ्काएं इसके पहिले उठा करती थीं, क्योंकि मेरा लालन पालन एक ऐसे विदेश (इङ्गलण्ड)में हुआ है, जहाका धर्म और रीति नीति बिल्कुल ही दूसरी रही है। उस समय मुझे हिन्दू धर्मकी कितनी ही बातें मनगढन्त सी बोध होतीं, इसके कितने ही सिद्धान्त स्वप्नवत्—मायातुल्य जान पडते। किन्तु दिन प्रति दिन मेरा भ्रम दूर होता गया और मुझे हृदयके अन्तःपुरमें हिन्दू धर्मके सच्चे मर्मका प्रकृत अनुभव होने लगा। इस धर्मकी कितनी ही बातोंने मेरे जीवनकी भित्तिका कार्य किया है, जिसका ज्ञान किसी भी भौतिक विज्ञानके द्वारा प्राप्त करना असाध्य है।

जिस समय मैं ईश्वर भक्तिमें लगा उस समय भौतिकता तथा नास्तिकताने मेरी बुद्धिपर प्रधानता प्राप्त करली थी। मैंने अपने मनमें दृढ निश्चय कर लिया था, कि ईश्वर कोई चीज नहीं है। मुझे ईश्वर तो कहीं नजर ही नहीं आते थे। किसी किसी प्रकार वेद, गीता तथा हिन्दू धर्मकी सत्यतामें मेरा प्रवेश हुआ। तब मैंने जाना कि हो न हो योगमें कोई सत्य अवश्य है। वेदान्तके आधार पर अवलम्बित सत्यतामें कोई न कोई गूढ रहस्य अवश्य है। योगाभ्यास तथा अपनी बातकी सत्यताकी ऊहापोहमें मैं इन्हीं प्रार्थनाओंके द्वारा लगा कि "हे भगवन्! अगर तुम कहींपर विद्यमान हो तो तुम मेरे हृदयकी बात अवश्य ही जानते होंगे। तुम्हें ज्ञात होगा, कि मैं मोक्षकी अभिलाषा नहीं करता हूं। मुझे उन

वस्तुओंकी अभिलाषा तनिक भी नहीं है, जिन्हें और लोग स्वभावत किया करते हैं। मैं तुमसे केवल वही शक्ति चाहता हू जिसके द्वारा राष्ट्रोत्थान में सहायता मिल सके। मैं केवल राष्ट्रके लिये और कुछ दिनोंतक जीनेकी अभिलाषा करता हू तथा इसीके उत्थान कार्य में मैं अपना सारा जीवन व्यतीत कर दू, यही मेरी एकमात्र आकांक्षा है। योगसाधनके लिये मैंने बहुत कुछ प्रयत्न किया और शेषमें कुछ सफलता भी मुझे प्राप्त हुई है, किन्तु इससे मुझे अभीतक सन्तोष नहीं।" उसी कोठरीसे मैंने फिर भी प्रार्थना की—"हे परमात्मन्! मैं नहीं जानता कि मैं क्या और कैसे करू, इसलिये तुम्हीं मुझे आदेश करो"। योगोपासनके समय मुझे ईश्वरसे दो आदेश मिले—"मेरे प्रदर्शित कार्यको करो, इसे तुम्हारे राष्ट्रोत्थान कार्य में अवश्य सहायता मिलेगी। शीघ्र ही समय आवेगा, जब तुम जेलसे छूट जावोगे क्योंकि मेरी इच्छा नहीं है कि तुम इसबार दण्डित होकर अपना समय व्यर्थ नष्ट करो। आदेशकी तुम्हें अभिलाषा थी, जिसने तुम्हें आदेश दिया है, वही मैं तुम्हें आज्ञा देता हू, कि तुम जावो और अपना कार्य शीघ्रही प्रारम्भ कर दो।" प्रथम आदेश यही है जिसे मैंने आपके सम्मुख कह सुनाया।

ग्यारहवां परिच्छेद।

अरविन्द और कारावास।

योगी अरविन्दने अपने कारावास जीवनका पूरा विवरण लिखा है। वह विवरण पहले बंगालके 'सुप्रभात' नामक मासिक पत्रमें छपा था, पीछे वह पुस्तकाकार भी छप गया। हमारे चरित्र नायकके जीवन से कारावासका बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। असल बात तो यह है, कि योगी अरविन्दका वह कारावासही उनके जीवनकी मुख्य घटना युगान्तर उपस्थितकर देने वाली घटना है, इसीलिये यहाँ उसका कुछ अंश दे देना परमावश्यक है। योगी अरविन्द अपनी कारा काहिनी में लिखते हैं —

"शुक्रवार १ ली मई सन् १६०८ ई० की रातको मैं खूब निश्चिन्त होकर सो रहा था। सवेरे पाँच बजेके करीब मेरी बहन घबराई हुई मेरे कमरेमें आई और मुझे पुकारने लगी। मैं उसकी आवाज सुनकर जग गया। क्षणभर में ही मेरा वह छोटा सा कमरा सशस्त्र पुलिसके आदमियोंसे भर गया। उनमें पुलिस सुपरिण्टेडेण्ट क्रेगन साहब चौबीस परगनाके क्लार्क साहब और

हमारे पुराने परिचित विनोदकुमारगुप्त तथा कितने ही इन्सपेक्
सिपाही, डिटेक्टिव और खानातलाशीके गवाह थे।

मैं बिछौनेपर बैठा हुआ था, मेरी आँखोंमें नींद भरी हुई थ
उसी समय क्रेगन साहबने मुझसे पूछा,—"अरविन्दघोष कौ
हैं?" मैंने उत्तर दिया,—"मेरा ही नाम अरविन्दघोष है।" य
सुनते ही उन्होंने एक सिपाहीको मुझे गिरफतार करनेका हुक
दिया। क्रेगन साहबके हुक्मसे मेरे हाथोंमें हथकड़ी औ
कमरमें रस्सी बांध दी गई। एक हिन्दुस्तानी सिपाही उ
रस्सीको पकड़े हुए मेरे पीछे खड़ा रहा।

"शैलेन्द्र और मैं दोनों लालबाजारके थानेमे दोमञ्जिलेके ए
बड़े कमरेमें रखे गये। वहांपर हमलोगोंको भोजन न कराकर केवल
थोड़ा सा जलपान कराया गया। थोड़ी देरके बाद दो अंगरे
मेरे कमरेमें आये; पीछे मुझे मालूम हुआ, कि उनमें एक पुलिस
कमिश्नर हैलिडे साहब थे। हैलिडे साहब हम दोनोंको एक
साथ देखकर सारजेण्ट पर बहुत लाल पीले हुए और मेरी ओ
इशारा करके कहने लगे,—"खबरदार! इस आदमीके साथ को
रहने और बातचीत न करने पावे।" उसी समय शैलेन्
एक दूसरे कमरेमें ले जाकर बन्द कर दिया गया। सब लोग
के वहांसे चले जाने पर हैलिडे साहबने मुझसे पूछा, —"क्या
कायरोंके नीचतापूर्ण कार्यमें हाथ बंटानेमें आपको कुछ लज्जा
नहीं आती?" मैंने इसके उत्तरमें कहा,—"आपको इस बातके
मान लेनेका क्या अधिकार है, कि मेरा उस कामसे सम्बन्ध

था।” हैलिडे साहबने कहा—“यह केवल मैंने मान ही नहीं लिया है, परन्तु मैं सब कुछ जानता हूं।” मैंने उत्तर दिया कि आप जानते हों या न जानते हों, किन्तु मैं कदापि नहीं मान-सकता, कि मेरा इस हत्याकाण्डसे कुछ सम्बन्ध है। हैलिडे साहबने फिर कुछ नहीं कहा।

रविवारका सारा दिन जेलमें ही कटा। कमरेके सामने एक सीढी थी। सुबह मैंने देखा, कि थोडी उमरके कुछ युवक सीढीसे उतर रहे हैं। मैं उनको पहचानता न था, पर अनुमानसे मैंने समझ लिया, कि वे लोग भी इसी मुकद्दमेमें पकडे गये हैं। पीछेसे मालूम हुआ, कि ये सब लडके मानिकतल्ले बागके थे। एक महीना बाद जेलमें ही इन लोगोंसे मेरा परिचय भी हुआ। थोडी देर बाद हाथ मुँह धो चुकने पर मैं नीचे लाया गया। परन्तु वहा नहानेका कुछ प्रवन्ध न था, इस कारण मैं स्नान न कर सका। उस दिन प्रातःकाल मुझे केवल उबाली हुई दाल और भात भोजन करनेको मिला। बडी कठिनाईसे एक दो ग्रास ज्यों त्यों कर पेटमें डाला, परन्तु अन्तमें उसे छोड ही देना पडा। सन्ध्याके समय भोजनके लिये केवल लाई मिली। तीन दिनों तक हम लोगोंका यही आहार था; किन्तु सोमवारको सारजण्टने मुझपर प्रसन्न हो चुपचाप चाय और रोटी खानेको दी।

हमारे पुराने परिचित विनोदकुमारगुप्त तथा कितने ही इन्सपेक्टर सिपाही, डिटेक्टिव और खानातलाशीके गवाह थे।

मैं बिछोनेपर बैठा हुआ था, मेरी आंखोंमें नींद भरी हुई थी, उसी समय क्रेगन साहबने मुझसे पूछा,—"अरविन्दघोष कौन हैं?" मैंने उत्तर दिया,—"मेरा ही नाम अरविन्दघोष है।" यह सुनते ही उन्होंने एक सिपाहीको मुझे गिरफतार करनेका हुक्म दिया। क्रेगन साहबके हुक्मसे मेरे हाथोंमें हथकडी और कमरमें रस्सी बाध दी गई। एक हिन्दुस्तानी सिपाही उस रस्सीको पकडे हुए मेरे पीछे खड़ा रहा।

"शैलेन्द्र और मैं दोनों लालबाजारके थानेमें दोमञ्जिलेके एक बड़े कमरेमें रखे गये। वहापर हमलोगोंको भोजन न कराकर केवल थोडा सा जलपान कराया गया। थोडी देरके बाद दो अंगरेज मेरे कमरेमें आये, पीछे मुझे मालूम हुआ, कि उनमें एक पुलिस कमिश्नर हैलिडे साहब थे। हैलिडे साहब हम दोनोंको एक साथ देखकर सारजेण्ट पर बहुत लाल पीले हुए और मेरी ओर इशारा करके कहने लगे,—"खबरदार! इस आदमीके साथ कोई रहने और बातचीत न करने पावे।" उसी समय शैलेन्द्र एक दूसरे कमरेमें ले जाकर बन्द कर दिया गया। सब लोगों के वहासे चले जाने पर हैलिडे साहबने मुझसे पूछा,—"क्या कायरोंके नीचतापूर्ण कार्यमें हाथ बंटानेमें आपको कुछ लज्जा नहीं आती?" मैंने इसके उत्तरमें कहा,—"आपको इस बातके मान लेनेका क्या अधिकार है, कि मेरा उस कामसे सम्बन्ध

था।" हैलिडे साहबने कहा—"यह केवल मैंने मान ही नहीं लिया है, परन्तु मैं सब कुछ जानता हूं।" मैंने उत्तर दिया कि आप जानते हों या न जानते हों, किन्तु मैं कदापि नहीं मान सकता, कि मेरा इस हत्याकाण्डसे कुछ सम्बन्ध है। हैलिडे साहबने फिर कुछ नहीं कहा।

रविवारका सारा दिन जेलमें ही कटा। कमरेके सामने एक सीढी थी। सुबह मैंने देखा, कि थोडी उमरके कुछ युवक सीढीसे उतर रहे हैं। मैं उनको पहचानता न था, पर अनुमानसे मैंने समझ लिया, कि ये लोग भी इसी मुकद्दमेमें पकडे गये हैं। पीछेसे मालूम हुआ, कि ये सब लडके मानिकतल्ले बागके थे। एक महीना बाद जेलमें ही इन लोगोंसे मेरा परिचय भी हुआ। थोडी देर बाद हाथ मुँह धो चुकने पर मैं नीचे लाया गया। परन्तु वहा नहानेका कुछ प्रबन्ध न था, इस कारण मैं स्नान न कर सका। उस दिन प्रातःकाल मुझे केवल उबाली हुई दाल और भात भोजन करनेको मिला। बडी कठिनाईसे एक दो ग्रास ज्यों त्यों कर पेटमें डाला, परन्तु अन्तमें उसे छोड ही देना पडा। सन्ध्याके समय भोजनके लिये केवल लाई मिली। तीन दिनों तक हम लोगोंका यही आहार था, किन्तु सोमवारको सारजण्टने मुझपर प्रसन्न हो चुपचाप चाय और रोटी खानेको दी।

बादको मैंने यह सुना, कि मेरे वकील साहबने कमिश्नर साहबसे मेरे घरसे भोजन भेजे जानेके लिये इजाजत मांगी थी,

पर हैलिडे साहब इस पर सहमत नहीं हुए। यह भी सुननेमें आया, कि अन्य असामियों के वकील अथवा एटरनी भी उन लोगोंके साथ मुलाकात नहीं कर सकते थे। मैं नहीं कह सकता, कि यह निषेध किस कानूनके अनुसार था। निस्सन्देह वकील की सलाह मिलनेसे मुझे कुछ सुविधा अवश्य होती। फिर भी मुझे इससे कुछ विशेष प्रयोजन न था। परन्तु और बहुतेरोंके मुकदमोंमें इस बातसे हानि अवश्य पहुंची है। सोमवारके दिन हम लोगोंको कमिश्नर साहबके सामने उपस्थित किया गया। हम लोगोंको वहा कई दलोंमें बाँट कर पुलिस वाले ले गये। मेरे साथ शैलेन्द्र और अविनाश थे। हम तीनों अपने पूर्व जन्मके सञ्चित पुण्य कर्मों के कारण कुछ पहले गिरफ्तार हो जानेसे कानून की जटिलताको कुछ कुछ समझते थे और इसी कारण कमिश्नर साहबके सामने हर एक बात प्रकट करनेसे हम लोगोंने इनकार किया। दूसरे दिन हम लोग मजिस्ट्रेट थार्नहिलके इजलासमें पेश किये गये। इस समय श्रीयुक्त कुमार कृष्णदत्त, मेन्युएल साहब और मेरे एक नातेदारसे हमारी पहली मुलाकात हुई। उस समय मेनुएल साहबने मुझसे पूछा, कि पुलिस कहती है, कि आपके मकानमें सन्देहजनक लेख मिले हैं। क्या इस प्रकार की कोई चिट्ठी या लेख आपके यहा था? मैंने उत्तर दिया, कि बिना किसी सन्देहके मैं कह सकता हूं, कि ऐसे किसी कागज या चिट्ठीका मेरे मकान में रहना नितान्त असम्भव है।

मैं जिस कोठरीमें रखा गया था, वह नौ फुट लम्बी और पांच छः फुट चौड़ी थी। उसमें कोई खिड़की न थी और उसके सामने बड़े बड़े लोहेके सींकचे लगे हुए थे। कमरेके बाहर एक पक्का आँगन और ईंटों की ऊंची ऊंची दीवारें थीं। सामने लकड़ीका एक बड़ा दरवाजा था। उस दरवाजेमें मनुष्यों की आखों की ऊंचाई पर छोटे छोटे गोल सूराख बने हुए थे। जिस समय दरवाजा बन्द कर दिया जाता था, उस समय पहरेवाले उन सूराखोंसे झांक झांक कर देखा करते थे, कि कैदी क्या कर रहा है। परन्तु मेरे आंगनका दरवाजा प्रायः खुला रहता था। इस प्रकारके पास पास छः कमरे थे। इन कमरोंको डिक्री कहते हैं। डिक्रीका अर्थ अधिक दण्ड वालोंका कमरा है। जज अथवा जेलके सुपरिण्टेण्डेण्टके हुक्मके अनुसार जिन लोगोंको निर्जन कारावासका दण्ड मिलता था उनको इन्हीं छोटे छोटे कमरोंमें रहना पड़ता था। इस निर्जन कारावासमें भी न्यूनाधिक दण्ड रहता था। जिन लोगोंको कठोर दण्ड मिलता था, उनके आगेका दरवाजा बन्द रहा करता था और वे मनुष्य समाजसे सब प्रकार अलग रखे जाते थे। केवल पहरेवालों और दोनों वक्त भोजन देने वाले कैदीको छोड़ उनका इस जगत् की और किसी वस्तुसे कोई सम्बन्ध न था।

थार्नहिल साहबके इजलाससे हम लोगोंको गाड़ीमें बैठाकर अलीपुर ले जाया गया। फिर कचहरीसे हम लोग जेल पहुंच कर वहांके कर्मचारियोंके सुपुर्द कर दिये गये। जेल ले जानेके

पहले हम लोगोंको स्नान करवाया गया। जेलके कपडे पहनाये गये और हम लोगोंके कुरते तथा धोतियाँ धुलनेको ले लिये गये। चार दिनके पीछे स्नान करके हम लोगोंने मानों स्वर्गीय सुख पाये। स्नानके पीछे हम लोग अपनी अपनी कोठरियोंमें पहुचा दिये गये। मैं ज्योंही अपने निर्जन कोठरीमें घुसा, त्यों ही इसका दरवाजा बन्द कर दिया गया।

यही जगह हम लोगोंको रहनेके लिये मिली, किन्तु इसके अतिरिक्त हमारे कृपानिधान कार्यकर्त्ताओंने हमारी मेहमानदारी करने में कोई भी बात उठा न रखी। हम लोगोंके माल असबाबमें एक थाली और कटोरा था। ये दोनों आगनको सुशोभित करते थे। जिस समय वह थाली कटोरा माजा जाता था उस समय उसकी सफाई देखकर मेरा हृदय शीतल हो जाता और उसकी निर्दोष उज्ज्वलताके भीतर 'स्वर्गजात' ब्रिटिश राजकी उपमा देखकर मैं राजभक्तिका एक निर्मल आनन्द अनुभव करता था। दोष केवल यह था कि मेरे इस आनन्दको देखकर थाली भी बहुत प्रसन्न हो जाती, क्योंकि उसके ऊपर धीरेसे ऊंगली रखते ही वह अरबके फकीरोंके समान घूम-घूम कर नाचने लगती थी। उस समय एक हाथसे थाली पकडने और दूसरे हाथसे भोजन करनेके सिवा और कोई उपाय न था। अन्यथा थाली नाचते-नाचते जेलका मुट्ठी भर अतुलनीय अन्न लेकर भागनेकी चेष्टा करती थी।

थालीसे कटोरा अधिक प्रिय और उपकारी वस्तु थी। यह

कटोरा जड़ पदार्थोंमें एक ब्रिटिश सिविलियनके समान था, क्योंकि जैसे प्रत्येक अङ्गरेज सिविलियन स्वभावसे ही हर काममें दक्ष और योग्य होता है—जज, शासक, पुलिसका ओफिसर, टेक्सिग आफिसर, म्युनिसिपेलिटीका अध्यक्ष, शिक्षक, धर्मोपदेशक जो चाहिये सो एक सिविलियन अंग्रेजको बना सकते हैं, वैसा ही मेरे आदरका पात्र यह कटोरा भी था। क्योंकि कारागृहमें जाते ही उस कटोरेसे पानी लेकर मुह धोया, स्नान किया और फिर थोड़ी देर बाद जब भोजन करने बैठा तो उसी कटोरेमें दाल अथवा तरकारी दी गयी और फिर उसी कटोरेसे पानी भी पिया एवं उठने समय उसीसे आचमन भी किया। उस कटोरेमें जातपांतका विचार नहीं था इस प्रकारकी अमूल्य वस्तु, जिससे सब काम निकल सके, अङ्गरेजोंके ही जेलमें मिलनी सम्भव है। यह कटोरा सांसारिक उपकारोंके अतिरिक्त योग साधनका भी एक कारण बना। घृणा परित्याग करनेके लिये इस प्रकारका सहायक और उपदेशक कहां मिल सकता था? निर्जन कारावासके पीछे जब हमलोग सब एक साथ रखे गये, तब हमारे इस सिविलियन (कटोरे) के अधिकार कुछ कम कर दिये गये। हमारे प्रबन्धकर्ताओंने हमलोगोंकी शौच क्रियाके लिये एक दूसरा बर्त्तन रखा दिया।

एक महीने तक जबर्दस्ती इसी कटोरे द्वारा मुझे घृणा रोकना सिखाया गया। शौच-क्रियाका सारा प्रबन्ध, मानों, इसी घृणाको दूर करनेके लिये किया गया था। मैं ऊपर कह चुका

हू, कि निर्जन कारावास एक विशेष दण्ड है और इस दण्डका मूलतत्व मुक्त आकाश और मनुष्य समाजसे पृथक् रखना है। कमरेके बाहर शौचका प्रबन्ध करनेसे कहीं तत्व भङ्ग न हो जावे इस कारण कमरेके अन्दर ही दो टोकरिया कोलटारसे रङ्गी हुई रखी हुई थीं। सवेरे और सायङ्कालको मेहतर आकर उन टोकरियोंको साफ किया करता था, परन्तु तीव्र आन्दोलन करने और मर्मस्पर्शी वक्तृता देनेपर अन्य समय भी आकर वह उनको साफ कर जाता, परन्तु असमय पायखाना जानेसे शायद प्रायश्चित रूपमें कई घण्टे दुर्गन्ध सहनी पडती थी। दूसरी बार निर्जन कारावास मिलने पर इस विषयमें सुधार किया गया। किन्तु अङ्गरेज लोगोंके सुधारमें पुरानी बातोंके मूलतत्वको पूर्ण रूपसे कायम रखकर केवल शासन-प्रणालीमें थोडासा उलट फेर ही होता है, इस बातके कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती, कि ऐसे छोटेसे कमरेमें शौचका प्रबन्ध रखनेके कारण प्राय सर्वदा और विशेष कर भोजनके समय और रातको बडा ही कष्ट भोगना पडता था। मैं जानता हू कि सोनेके कमरेमें पायखानेका प्रबन्ध होना विलायती सभ्यताका ही एक अङ्ग है, किन्तु एक छोटेसे कमरेमें सोने, खाने और पायखाने इन तीनोंका होना विचित्र बढी हुई सभ्यता है। आदत बिगडी हुई होनेके कारण हम भारतवासियोंके लिये सभ्यताके इतने ऊचे सोपान पर पहुचना बडा ही कष्टकर है!

हमलोगोंके सामने और भी कई एक चीजें थीं। नहानेके लिये

एक बालटी थी, पानी रखनेके लिये दूसरी टीनकी नलनुमा बालटी थी और जेलके दो कम्बल थे। नहानेकी बालटी आँगनमें रखी रहती थी, वहीं पर मैं स्नान किया करता था, परन्तु पीछे यह कष्ट भोगना पडा। पहले तो पासकी गोशालाकी निगरानी करने वाला कैदी स्नानके समय मेरी इच्छाके अनुसार बालटीमें पानी भर दिया करता था। जेलकी तपस्यामें स्नानके समय हर एक कैदीको विलास और सुखकी इच्छाको तृप्त करनेका अवसर मिलता था। किन्तु दूसरे कैदियोंके भाग्यमें यह भी न था, उनको एक बाल्टी जलमें ही शौच करना, बासन माँजना और नहाना पडता था, हमलोगोंका मुकद्दमा अभी चल रहा था, इसलिये हमलोगोंको कुछ अधिक भोग विलासकी अनुमति थी। अन्य कैदी केवल दो चार कटोरे पानीसे ही स्नान कर पाते थे। अङ्गरेज लोग समझते हैं, कि भगवत्प्रेम और शारीरिक स्वच्छन्दता समान और दुर्लभ सद्गुण हैं। इस जातीय प्रवादकी रक्षाके लिये अथवा इसलिये, कि अधिक विलाससे कैदियोंकी तपस्या भग न हो जेलमें नहानेका ऐसा प्रबन्ध रहता है। इन दोनोंमें मुख्य कारण कौन सा है, इस बातका निर्णय करना असम्भ है।

कैदी लोग, कर्मचारियोंकी इस दयाको 'कौवा नहान' कह कर उसकी हँसी उडाया करते थे। अस्तु, नहानेके प्रबन्धसे पीनेके पानीका प्रबन्ध और भी अधिक मजेदार था। गरमीका दिन था, मेरे कमरेमें हवाका प्रवेश तो नाम मात्रको भी न हो

पाता था । परन्तु मई मासकी प्रचण्ड धूप बिना किसी बाधाके प्रवेश कर सकती थी, अतएव मेरा छोटा सा कमरा थोडी ही देरमें तपती हुई भट्ठीके समान गरम हो जाता था। इस प्रकार उस गरम कमरेमें रहनेके कारण प्यास अत्यन्त प्रबल हो उठती थी और प्यास बुझानेके लिए उस बाल्टीके गरम जलके सिवाय और कोई दूसरा उपाय न था। मेरे इस जल कष्टको देखकर जेलके डाक्टरको कुछ दया हुई और उन्होंने बहुत कुछ चेष्टा करके मेरे लिए एक घडेका प्रबन्ध कर दिया। परन्तु घडेका प्रबन्ध होनेके पहले ही मैंने प्यासपर विजय पाली थी। इन सब कष्टोका उल्लेख मैंने अपना दुखडा रोनेके विचारसे नहीं किया है किन्तु केवल यह दिखानेके लिये कि सभ्यताभिमानी बृटिश राज्य में उन कैदियोंके साथ भी जिनका दोष न्यायालय द्वारा सप्रमाणित नहीं हो चुका है, कैसा अद्भुत सलूक किया जाता है।

वहा दोमञ्जिले परके कमरेमें बहुत ऊँचे पर एक खिडकी थी जिससे बाहरका आकाश भी नही दीख पडता था। वहा रहनेपर यह बात कल्पनातीत हो जाती थी, कि इस संसारमें पेड, पत्ते, मनुष्य, पशु, पक्षी, घर द्वार भी हैं। जब बरामदेका दरवाजा खुला रहता था, तब गारद्के निकट बैठनेपर बाहर जेलकी खुली जगह और आते जाते हुए कैदियोकी सूरत देख पडती थी। बरामदेकी दीवारके निकट एक वृक्ष था, उसकी हरी छटा हृदयको शीतल करती थी। छ. डिगरीके कमरोंके सामने जो सन्तरी चहल कदमी करता था, उसका मुख और पैरोंके शब्द रात दिन

देखते-सुनते रहनेके कारण परिचित मित्रकेसे मालूम होते थे। मेरे कमरेकी बगलमें एक गोशाला थी। कैदी, मेरे कमरेके सामनेसे, गायोंको चरानेके लिये ले जाते थे। गाय और गोपाल नित्यके प्रिय दृश्य थे। अलीपुरके निर्जन कारावासमें मुझे अपूर्व प्रेमकी शिक्षा मिली।

कारावासका पहला दिन बड़ी शान्तिके साथ व्यतीत हुआ। सभी नयी चीजें देखकर मनमें बड़ी स्फूर्ति हुई। लालबाजारकी हाजतके साथ तुलना करके इस अवस्थामें भी मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ और भगवानके ऊपर निर्भर रहनेके कारण यहां निर्जनता नहीं मालूम होती थी। जेलका विचित्र भोजन देखकर भी इस भावमें व्याघात नहीं हुआ। मोटे चावलका भात, धानकी भुस्सी, ककड़, कोरी, बाल, मिट्टी इत्यादि कई प्रकारके मसाले दे कर बनाया जाता था। स्वादरहित दालमें जलकी ही मात्रा अधिक रहती, और तरकारीमें घास पात मिला हुआ रहता था। पहले मैं यह नहीं जानता था, कि मनुष्योंका भी भोजन ऐसा स्वादरहित तथा निःसार हो सकता है। उस शाक की घोर काली मूर्त्ति देखकर पहले भय हुआ था, दो ग्रास खाकर उसको भक्तिके साथ नमस्कार किया। तरकारीके सम्बन्धमें सभी कैदियोंकी किस्मत एक ही कलमसे लिखी गयी थी। एकबार जिस तरकारीका चौकेमें प्रवेश हो जाता था, अनन्त-कालतक फिर उसका वहां पांव जमा रहता था। इस समय शाकका पांव वहां जमा हुआ था। दिन, पखवारा और महीना

बीत जाता था, पर दोनों शाम यही शाक, दाल और भात खाने को मिलते थे। इन चीजोंके बदलनेके की बात तो अलग रही, इनके रूपमें भी कुछ उलट फेर नहीं होता था। इस विषयमें अन्य कैदियोंकी अपेक्षा, मेरा भाग्य अच्छा था, वह भी डाक्टर बाबूकी दयासे। उन्होंने मेरे लिये अस्पतालसे दूधको प्रबन्ध कर दिया था, उससे कई दिनोंतक शाकके दर्शन नहीं हुए।

उस रातको बहुत सवेरे सो गया, पर निश्चिन्त हो कर निद्राका सुख-भोग करना निर्जन कारावासका नियम नहीं है। सुख पूर्वक निद्रा भोग करनेसे कैदीकी सुख-प्रियता प्रकट हो सकती है, इसी कारण वहा यह नियम प्रचलित है, कि जितनी बार पहरा बदले, उतनी बार कैदीको पुकारकर जगा देना चाहिये। जबतक कैदी अपने रहनेका चिह्न जागृति होकर बोल कर नहीं देता, तबतक कैदीका पिण्ड नहीं छूटता। जो लोग छ डिगरीमें पहरा देते थे, उनमें अधिकाश इस कर्तव्य-पालनसे विमुख थे—सिपाहियोंमें कठोर कर्मके ज्ञानकी अपेक्षा दया तथा सहानुभूतिका भाव अधिक था। विशेषत पश्चिमके रहनेवाले सिपाहियोंका ऐसा ही स्वभाव था। पर कुछ लोग कैदियोंका पिण्ड नहीं छोड़ते थे। वे लोग मुझको जगाकर पूछते थे,—"बाबू अच्छे तो हैं ?" यह असमयका रहस्यालाप सदा प्रीतिकर नहीं होता था, पर मैंने समझा, कि जो इस प्रकार करते हैं, वे सरलभावसे नियम समझकर मुझे जगा रहे हैं। कई दिन विरक्त हो कर भी मैंने यह सब सहन किया। अन्तमें निद्राकी

रक्षा करनेके लिये धमकी देनी पडी। दो चार बार धमकी देनी के बाद देखा, कि रातमें कुशल समाचार पूछ लेनेकी प्रथा आपसे आप उठ गयी।

दूसरे दिन प्रात काल चार बज कर पन्द्रह मिनट पर जेलका घण्टा बजा। कैदियोंके जगानेके लिये यही पहला घण्टा है। कुछ मिनटके बाद फिर घण्टा बजा। दसों घण्टेके बाद कैदी बाहर निकलते हैं और वे हाथ मुख धोनेके बाद लपसी खाकर काम आरम्भ करने लगते हैं। इतने घण्टोंके कोलाहलमें नींद आना असम्भव समझ मैं भी हाथ मुँह धोकर घरमें बैठ गया। थोडी देरके बाद लपसी मेरे कमरेमें आयी, पर मैंने उस दिन उसे नहीं खाया। उसदिन उसे आँखोंसे देख भर लिया। इसके कई दिनों बाद पहले पहल इस श्रेष्ठ अन्नको खाना पडा। लपसीका मतलब है माडके साथ बना हुआ भात यही कैदियोंकी छोटी हाजिरी है।

उस दिन साढे ग्यारह बजे स्नान किया। पहले चार पांच दिनों तक तो उन्हीं कपडोंको पहने रहना पडा, जिन्हें पहनकर मैं घरसे चला था। पर स्नानके समय गोशालाका जो बूढा कैदी, मेरे रक्षण वेक्षणके लिये नियुक्त था, उसीने मेरे नहानेके लिये एक लंगोटीका प्रबन्ध कर दिया। जब तक मेरी धोती गीली रहती थी, तबतक मैं उसी लंगोटी पहने रहता था। मुझे न तो कपडा धोना पडता था और न बर्तन धोने पडते थे। एक कैदी मेरा यह सब काम कर

ग्यारह बजे भोजनका समय था। कमरेमें ही पायखानेका प्रबन्ध होनेके कारण धूपमें बैठकर बरामदेमें भोजन करता था। सन्तरी भी मेरे इस काममें कुछ रुकावट नहीं डालते थे। सध्याका भोजन पाच साढे पाच बजे मिलता था। उसके बाद गारद खोलनेकी मुमानियत थी। सात बजे प्रधान जमादार कैदी वार्डरोंको एकत्र कर उच्चस्वरसे उनका नाम पढ़ता था। नाम पढना समाप्त होने पर सब अपने अपने स्थानपर चले जाते थे। जो कैदी दिनभरके परिश्रमसे थके मादे रहते थे, उस समय जेलकी सारी यन्त्रणाएँ भूल निद्रा देवीकी गोदमें आनन्दके साथ सो जाते थे। परन्तु दुर्बल हृदयके कैदी, अपने दुर्भाग्य या भावी जेल कष्टको सोच सोचकर रोते थे। भगवद्भक्त चुपचाप रातके समय ईश्वर सान्निध्यका अनुभव कर प्रार्थना या ध्यानमें आनन्दका उपभोग करते थे। रातके समय दुर्भाग्य पतित और समाज द्वारा पीडित तीन सहस्र ईश्वरके बनाये हुए जीवोंकी विशाल नीरवतामें अलीपुर जेल स्वरूप प्रकाण्ड यन्त्रणागृह निमग्न हो जाता था।

मेरे जैसे राजनीतिक कैदियोंके साथ जेलमें प्राय भेंट नहीं होती थी। वे सब प्राय अलग अलग रखे गये थे। छ-डिक्रीके पीछे दो कतारमें छोटे छोटे कई कमरे थे। उन दो कतारोंमें कुल मिलकर चौआलीस कमरे थे। इसी लिये इनको चौआलीस डिक्री कहते हैं। इसी डिक्रीकी एक लाइनमें अधिकाश आसामियोंके रहनेका इन्तजाम था। इन लोगोंको निर्जन

कारावास नहीं भोगना पड़ता था, क्योंकि प्रत्येक-कमरेमें तीन आदमी रखे गये थे। जेलके दूसरी ओर और एक डिगरी थी, उसमें कई बड़े बड़े कमरे थे। एक एक कमरेमें बारह आदमी तक रह सकते थे। जिनके भाग्यमें यह डिकी पड़ता थी, वे बड़े सुखसे रहते थे। इस डिकीमें कितने ही लोग एक साथ कमरेमें आबद्ध थे, इन्हें रात दिन आपसमें बातचीत करनेका अवसर मिलता था जिससे बड़े सुखके साथ इनका समय व्यतीत होता था। गिरफ्तार होनेके बाद एक परेटमें मैंने अपने भाई बारीन्द्रको देखा था, पर उससे मैं कुछ बातचीत नहीं कर सका। प्राय: नरेन्द्रनाथ गोस्वामी ही मेरे निकट खड़े होते थे, इसी कारण इस समय इनसे कुछ ज्यादा परिचय हो गया था। गोस्वामी, बड़े सुन्दर जवान थे, कदमें लम्बे थे, शरीरका रंग गोरा था, शरीरमें शक्ति थी, और देह गठीली थी, पर उनकी आखोंसे बुरी प्रवृत्ति प्रकट होती थी। बातचीतमें भी कुछ बुद्धिमत्ताका परिचय नहीं मिलता था। इस विषयमें अन्य युवकोंसे उनमें बहुत अन्तर था। अन्य युवकोंके मुखसे प्राय. उच्च तथा पवित्र भाव पूर्ण बातें निकलती थी। उनकी बातोंसे उनकी प्रखर बुद्धिशीलता, ज्ञानलिप्सा, और स्वार्थहीन महती आकाक्षाका पता चलता था। गोस्वामीकी बातें निर्बोध और क्षुद्राशय मनुष्योंकी बातों जैसी होनेपर भी तेज और साहससे पूर्ण रहती थीं। उस समय उनको पूर्ण विश्वास था कि मैं छूट जाऊंगा। वह कहते थे "मेरे पिता मुकद्दमोंके कीड़े हैं

कभी पुलिस उनके साथ पार नहीं पा सकती। इजहार भी मेरे विरुद्ध नहीं होगा, यही सिद्ध होगा, कि पुलिसने शारीरिक दण्ड देकर इजहार करा लिया है।" मैंने पूछा "तुम पुलिसके हाथमें थे। गवाह कहा है?" गोस्वामीने प्रसन्नतापूर्वक कहा "मेरे पिता सैकड़ों मुकद्मे लड़ चुके हैं। गवाहकी कमी नहीं रहेगी।" ऐसे ही आदमी सरकारी गवाह (Approver) होते हैं।

इसके पहले असामियोंकी असुविधाओं और अनेक कष्टोंकी बातें कहीं गयी हैं पर यहां यह भी कह देना उचित है कि यह सब जेलकी प्रणालीका दोष है, ये सब कष्ट जेलके किसीके भी व्यक्तिगत निष्ठुरता या मनुष्योचित गुणके अभावसे नहीं होते। बल्कि अलीपुर जेलमें जिनके ऊपर जवाबदेही थी, वे सभी अत्यन्त सज्जन दयाशील और न्यायपरायण थे।

निर्जन कारावासमें पहले दिन मेरे मनका भाव जैसा था, उसका वर्णन कर दिया। इस निर्जन कारावासमें, समय व्यतीत करनेके लिये पुस्तक या अन्य किसी वस्तुके बिना ही कई दिनोंतक रहना पड़ा था। पीछे एमर्सन साहबने आकर मुझे घरसे धोती, कुर्ता और पढ़नेकी पुस्तकें मंगानेकी अनुमति दी थी। मैंने जेलके कर्मचारियोंसे रोशनाई, दावात और जेलका छपा हुआ लेटर पेपर मांगकर पूजनीय मौसा सञ्जीवनीके सुप्रसिद्ध सम्पादकको धोती, कुर्ता और पढ़नेकी पुस्तकोंमें गीता तथा उपनिषद् भेजनेका अनुरोध किया। दो चार दिनोंमें ये पुस्तकें मुझे मिल गयीं। इन पुस्तकोंके पानेके पूर्व निर्जन

कारावासका महत्व समझनेका मुझे यथेष्ट अवसर मिला था। मैं समझ गया, कि इस प्रकारके "निर्जन" कारावासमें क्यों दृढ और सुप्रतिष्ठित बुद्धिका भी नाश हो जाता है और वह शीघ्र ही उन्मत्तावस्थामें चली जाती है। जेलमें आनेके पहले प्रतिदिन सवेरे और सन्ध्याको एक घण्टा ध्यान करनेका मेरा नियम था। इस निर्जन कारावासमें और कोई काम न रहनेके कारण अधिक देरतक ध्यानावस्थामें रहनेका प्रयत्न किया। पर सहस्र मार्ग पर दौड़ने वाले मनुष्योंके चञ्चल मनको ध्यानके लिये बहुत कुछ संयत तथा एक लक्ष्यपर रखना अनभ्यस्त लोगोंके लिये सहज नहीं है। किसी प्रकार डेढ़ दो घण्टातक एक भावसे मनको रख सकता था, अन्तमें मन विद्रोही हो जाता था और शरीर भी अवसन्न हो जाता था। पहले तो नाना प्रकारकी चिन्ताओं-में समय व्यतीत होता था। पर पीछे मेरा मन धीरे धीरे चिन्ता शक्ति रहित होने लगा उस समय ऐसा मालूम होता था, मानों, हजारों अस्पष्ट चिन्ताएं मनके द्वारपर चारों ओर मंडरा रही हैं जो भीतर प्रवेश करनेमें समर्थ न होने पर उस निस्तब्ध मनोराज्यकी नीरवतासे भयभीत हो चुपचाप भाग जाती थीं। इस अवस्थामें मैं अत्यन्त मानसिक कष्ट पाने लगा। प्रकृतिकी शोभा से चित्तवृत्तिके स्निग्ध होने तथा सन्तप्त मनसे सान्त्वना मिलनेकी आशासे बाहरकी ओर आंखें फाड़कर देखना, परन्तु उसी एकमात्र वृक्ष, नील आकाशके परिमित खण्ड और जेलके निरानन्द दृश्यसे कितनी देरतक इस अवस्थामें पड़े हुए किसी

भी मनुष्यका मन सान्त्वना पा सकता है? दीवारकी ओर देखा। उस कमरेकी वह उजली निर्जीव दीवार देखकर मानों मन और भी निरुपाय हो केवल बद्धावस्थाकी यन्त्रणा पाकर मस्तिष्क रूप पींजड़ेमें छटपट करने लगा। फिर ध्यान करने बैठा, पर किसी प्रकार ध्यान नहीं जमा बल्कि उस तीव्र विफलचेष्टासे मन और भी शान्त, अकर्मण्य और दग्ध होने लगा। चारों ओर आखें उठाकर देखा, अन्तमें देखा कि जमीन पर कई बड़ी चींटिया एक छिद्रके निकट टहल रही हैं। बस फिर क्या था? उन्हींकी चाल ढाल काम और चरित्र देखनेमें समय व्यतीत होने लगा। इसके बाद देखा, कि छोटी छोटी लाल चींटिया चहल कदमी कर रही हैं। काली, लालको पाते ही उसकी जान ले लेती थीं। अत्याचार पीडित लाल चींटियोंके ऊपर बड़ी सहानुभूति हुई। इससे एक काम हुआ चिन्ताका विषय भी मिल गया इन चींटियोंकी सहायतासे इधरके कई दिन बड़े मजेमें बीत गये। तथापि दोपहरतकका दीर्घ समय व्यतीत करनेका कोई उपाय नहीं सूझता था। निदान, मनको समझा दिया, बलात्कार चिन्ताको पकड लाया, पर दिनोंदिन मन विद्रोही होने लगा, हाहाकार करने लगा। समय मानो असह्य भार होकर उसका गला दबा रहा है। उसीके बोझसे चूर्ण चूर्ण होकर वह दम लेनेकी भी फुर्सत नहीं पाता। मानों स्वप्नमें शत्रु द्वारा आक्रान्त व्यक्ति गला दब जानेसे मरा जाता है अथवा हाथ पांव रहते भी हिलने डुलने की शक्तिसे रहित है। मैं अपने मनकी यह अवस्था

देखकर बड़े आश्चर्यमें पड़ गया। सच्ची बात है कि मैं कभी अकर्मण्य या निश्चेष्ट होकर बैठना पसन्द नहीं करता, पर कई बार अकेला बैठकर चिन्तामें समय व्यतीत किया है। इस समय मनमें इतनी दुर्बलता क्यों आ गयी, कि थोड़े ही दिनोंकी निर्जनतामें अकाश पातालका अन्तर है। घरमें बैठकर एकान्तवास करना और बात है, तथा दूसरेकी इच्छासे कारागारमें यह एकान्तवास करना और बात है। वहा अपनी इच्छानुसार मनुष्योंका आश्रय ले सकता हूं, पुस्तकगत ज्ञान या भाषा लालित्यसे बन्धु बान्धवोंके प्रिय सम्भाषणसे, मार्गके कोलाहलसे संसारके दृश्योंसे, मनको तृप्त कर हृदयको शीतल कर सकता हू, परन्तु यहा कठिन नियमसे आबद्ध हो दूसरेकी इच्छासे सभी से सम्बन्ध तोड़कर रहना होगा। कहावत है, कि जो निर्जनता बर्दाश्त कर सकता है, वह या तो देवता है या पशु। यह सयम मनुष्यके साध्यातीत हैं। पहले मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता था, पर अब मुझे मालूम हुआ कि वास्तवमें योगाभ्यास साधकके लिये भी यह सयम साध्य नहीं है। इटलीके राजाकी हत्या करने वाले ब्रेशीका भी भीषण परिणाम स्मरण हो आया। निठुर विचारकोंने उसे जानसे न मारकर सात वर्ष तक निर्जन कारावासमें रहनेका दण्ड दिया था। एक वर्ष भी नहीं बीतने पाया था कि ब्रेशी पागल हो गया। फिर भी इतने दिनों तक निर्जन कारावासका दण्ड सहा करनेके लिये उसकी जितनी प्रशंसा की जाये, सो सब थोड़ी है। क्या मेरे मनकी दृढ़ता

इतनी काम है ? उस समय मैं यह नहीं समझ सका, कि भगवान, मेरे साथ क्रीडा करते हैं। क्रीडाके बहाने मुझेकई प्रयोजनीय शिक्षाएं दे रहे हैं। पहले तो उन्होंने किस प्रकार निर्जन कारावासके कैदी उन्मत्त हो जाते हैं-सो दिखाकर ऐसे कारावास की अमानुषिक निष्ठुरता समझा, यूरोपीय जेल प्रणालीका घोर विरोधी बना दिया और पीछे जिसमें मैं अपनी शक्ति-भर अपने देशवासियों तथा संसारको मूर्खतासे हटाकर दयानुमोदित जेल प्रणालीका पक्षपाती बनानेकी चेष्टा करूँ, उन्होंने वही शिक्षा मुझे दी। स्मरण होता है, कि मैंने पन्द्रह वर्ष पूर्व विलायतसे स्वदेशमें लौटकर जिस समय बम्बईमें प्रकाशित होनेवाले "इन्दु-प्रकाश," नामक पत्रमें काग्रेसकी निवेदन नीतिका तीव्र प्रतिवादपूर्ण प्रबन्ध लिखना आरम्भ किया था, उस समय स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडेने युवकोंके मनपर इन प्रबन्धों का प्रभाव पडते हुए देखकर उनसे भेंट करनेके लिये मेरे जाने पर आध घण्टा तक यह लेखनी घोषणाका काम छोड़कर काग्रेसका कोई काम करनेकी शिक्षा दी। वह मेरे ऊपर जेल प्रणाली संशोधन करनेका भार देनेको इच्छुक थे। रानाडेकी इस अप्रत्याशित उक्तिसे मैं आश्चर्यान्वित तथा असन्तुष्ट हुआ था, और वह भार ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। उस समय मैं नहीं जानता था कि यह सुदूर भविष्यका पूर्वाभास मात्र है तथा एक दिन स्वयं भगवान मुझे जेलमें एक वर्षतक रखकर उस प्रणालीकी क्रूरता और व्यर्थता तथा संशोधनकी प्रयोजनीयता

समझावेंगे। अब मालूम हुआ, कि आजकलकी इस राजनैतिक भयस्थासे इस जेलकी-प्रणालीका संशोधन होनेकी सम्भावना नहीं है, पर स्व-अधिकार प्राप्त भारतमें जिससे विदेशी सभ्यता का यह नारकीय अंश गृहीत न हो, इसके लिए उद्योग करने और उस सम्बन्धकी युक्ति दिखानेके लिये मैं अपनी अन्तरात्माके निकट प्रतिज्ञाबद्ध हुआ। मेरे जेल भेजनेमें भगवानका दूसरा मतलब मैंने यह समझा, कि वे मेरे मनकी यह दुर्बलता मनके सामने लाकर उसका नाश करना चाहते हैं। जो योगावस्थाका प्रार्थी है उसके लिये जनता और निर्जनता समान होनी चाहिये। सचमुच थोड़े ही दिनोंमें यह दुर्बलता दूर हो गयी। अब मालूम हुआ, कि दस वर्ष तक भी एकान्तमें रहने पर मन विचलित नहीं होगा। मङ्गलमयने अमङ्गलके द्वारा भी परम मङ्गल दिखलाया। भगवानकी तीसरी इच्छा मुझे यह शिक्षा देनेकी थी, कि मेरा योगाभ्यास अपनी चेष्टासे कुछ भी नहीं होगा। श्रद्धा और पूर्णरूपसे आत्मसमर्पण ही सिद्धिलाभका मार्ग है, भगवान स्वयं प्रसन्न होकर जो शक्ति, सिद्धि, या आनन्द दें उसे ग्रहणकर उन्हींके काममें लगाना मेरी योगलिप्साका उद्देश होना चाहिए। जिस दिनसे अज्ञानका प्रगट अन्धकार कम होने लगा, उसी दिनसे मैं संसारकी सभी घटनाएँ देखते देखते मङ्गलमय श्रीहरिके आश्चर्य अनन्त मङ्गल स्वरूपत्वकी उपलब्धि करने लगा। ऐसी कोई घटना ही नहीं—वह घटना महान हो या छोटीसे छोटी हो—जिसके द्वारा कोई मङ्गल सम्पादित नहीं

इतनी कम है ? उस समय मैं यह नहीं समझ सका, कि भगवान, मेरे साथ क्रीडा करते हैं। क्रीडाके बहाने मुझेकई प्रयोजनीय शिक्षाए दे रहे हैं। पहले तो उन्होंने किस प्रकार निर्जन कारावासके कैदी उन्मत्त हो जाते हैं सो दिखाकर ऐसे कारावास की अमानुषिक निष्ठुरता समझा, यूरोपीय जेल प्रणालीका घोर विरोधी बना दिया और पीछे जिसमें मैं अपनी शक्ति भर अपने देशवासियों तथा संसारको मूर्खतासे हटाकर दयानुमोदित जेल प्रणालीका पक्षपाती बनानेकी चेष्टा करूँ, उन्होंने वही शिक्षा मुझे दी। स्मरण होता है कि मैंने पन्द्रह वर्ष पूर्व विलायतसे स्वदेशमें लौटकर जिस समय बम्बईमें प्रकाशित होनेवाले 'इन्दु-प्रकाश,' नामक पत्रमें कांग्रेसकी निवेदन नीतिका तीव्र प्रतिवादपूर्ण प्रबन्ध लिखना आरम्भ किया था, उस समय स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडेने युवकोंके मनपर इन प्रबन्धों का प्रभाव पडते हुए देखकर उनसे भेंट करनेके लिये मेरे जाने पर आध घण्टा तक यह लेखनी घोषणाका काम छोडकर कांग्रेसका कोई काम करनेकी शिक्षा दी। वह मेरे ऊपर जेल प्रणाली सशोधन करनेका भार देनेको इच्छुक थे। रानाडेकी इस अप्रत्याशित उक्तिसे मैं आश्चर्यान्वित तथा असन्तुष्ट हुआ था, और वह भार ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। उस समय मैं नहीं जानता था कि यह सुदूर भविष्यका पूर्वाभास मात्र है तथा एक दिन स्वय भगवान मुझे जेलमें एक वर्षतक रखकर उस प्रणालीकी क्रूरता और व्यर्थता तथा सशोधनकी प्रयोजनीयता

ओर जेलका कारखाना, दूसरी ओर अन्यान्य कैदियोंका निवास स्थान,—यही मेरे स्वाधीन राज्यकी सीमा थी। इस प्रकार इधर उधर विचरण करते समय मैं या तो उपनिषद्के गभीर भावोद्दीपक अक्षय शक्तिप्रद मन्त्रोंकी आवृत्ति करता था, या कैदियोंका कार्य कलाप तथा आवागमन देखकर ईश्वर सर्वव्यापी है, इस मूल सत्यकी उपलब्धि करनेका प्रयत्न करता था। वृक्ष, गृह दीवार मनुष्य, पशु, पक्षी, धातु मिट्टीमें "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" मन ही मन यह मन्त्र उच्चारणकर सर्वभूतोंमें वही उपलब्धि आरोपित करता था। ऐसा करते करते ऐसा भाव हो जाता था, कि कारागार, कारागार ही नहीं मालूम होता था। वह ऊँची और सादी दीवार वह लोहेकी गारद वह सूर्यरश्मि दीप्त नीलपत्र शोभित वृक्ष, वह साधारण अचेतन वस्तुएँ मेरी दृष्टिमें अचेतन नहीं मालूम होती थीं। मानों सारे जड पदार्थ सर्वव्यापी चैतन्यपूर्ण हो सजीव हो गये हैं, मुझे मालूम होता था, कि वे सब मुझे प्यार करते हैं, मुझे आलिङ्गन करना चाहते हैं। मनुष्य, गाय, चींटी, विहङ्ग चलते हैं, उडते हैं, गाते हैं, बोलते हैं, अथच सभी प्रकृतिकी क्रीडा है, भीतरकी एक महान् निर्मल निर्लिप्त आत्मा शान्तिमय आनन्दमें निमग्न हो गयी है। कभी कभी ऐसा मालूम होता था, मानों, भगवान उस पेडके नीचे वंशी बजाते हुए खडे हैं और उसी माधुर्य्यसे मेरे हृदयको खींचकर बाहर कर रहे हैं। मुझे सदा मालूम होने लगा, कि कोई मुझे आलिङ्गन कर रहा है, कोई मुझे गोदमें लिये हुए है। इस

मुझे शक्ति मिली मनुष्योंकी निष्ठुरतासे अत्याचार पीडित व्यक्तियोंके ऊपर दया और सहानुभूति बढ गयी तथा मैंने प्रार्थनाकी असाधारण शक्ति और सफलताको हृदयङ्गम किया।

मेरे निर्जन कारावासके समय डाक्टर डेली तथा सरकारी सुपरिन्टेण्डेण्ट साहब प्राय रोज मेरे कमरेमें आकर दो चार इधर उधरकी बातें करते थे। मैं नहीं कह सकता क्यों? आरम्भसे मै इनलोगोंकी सहानुभूति तथा दयाका पात्र रहता आया हू। मै इनलोगोंके साथ कोई विशेष बात नहीं कहता था, जो वे लोग पूछते थे, मै उसीका जवाब देता था; जो विषय वे लोग उठाते थे, उसको या तो चुपचाप सुनता था या दो एक साधारण बातें कह कर चुप हो जाता था, तथापि वे लोग मेरे यहा आना नहीं छोडते थे। एक दिन डेली साहबनेमुझसे कहा कि मैंने सरकारी सुपरिन्टेण्डेन्ट साहबसे कहलाकर बडे साहबसे इसके लिये अनुमति ले ली है कि तुम प्रतिदिन प्रात काल और सन्ध्या समय डिक्रीके सामने टहल सको। दिन भर एक छोटेसे कमरेमें तुम्हारा बन्द रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। इस प्रकार रहनेसे शरीर और मन दोनों खराब हो जाते हैं। उसी दिनसे मैं सन्ध्या समय और सवेरे डिक्रीके सामने टहलने लगा। सन्ध्याको दस पन्द्रह मिनिट और कभी कभी बीस मिनिट तक टहलता था, पर सवेरे एक और घण्टा कभी दो घण्टे तक बाहर रहता था। समय की कोई पाबन्दी नहीं थी। इस समय मुझे बडा आराम मिलता था। एक

हुआ और समीपवर्त्ती शब्द तथा दृश्य मनके परिभूतकर सभी क्रियाशक्तिको अन्तर्मुखी करनेकी शक्ति उत्पन्न हुई। पर मुकद्दमेकी पहली अवस्थामें वैसा नहीं हुआ। इस समय ध्यान-धारणाकी वास्तविक सामर्थ्य नहीं थी। इसी कारण यह व्यर्थ की चेष्टा परित्यागकर कभी कभी सभी जीवोंमें ईश्वरके दर्शन कर सन्तुष्ट होता था। अवशिष्ट समयमें विपत्कालके साथियोंकी बातें और उनके कार्य्य-कलापका लक्ष्य करता था, दूसरी दूसरी बातें सोचता था अथवा कभी नार्टन साहबकी श्रवणीय बातें या गवाहोंकी गवाहियां सुनता था। देखा, निर्जन कारागृहमें जिस प्रकार समय व्यतीत करना सहज और सुखकर हो गया है, जनताके बीच और उस गुरुतर मुकद्दमेके जीवन-मरणके खेलमें समय बिताना वैसा सहज नहीं है। अभियुक्त बालकोंका हँसी मजाक तथा आमोद प्रमोद सुनने और देखनेमें बड़ा अच्छा लगता था, अन्यथा अदालतके समय केवल विरक्ति मालूम होती थी। साढ़े चार बजनेपर बड़े आनन्दके साथ कैदियोंकी गाड़ीपर चढ़कर जेलमें लौट आता था।

पन्द्रह सोलह दिनकी बन्दी अवस्थाके बाद स्वाधीन मनुष्य-जीवनके संसर्ग तथा परस्परके मुखदर्शनसे अन्यान्य कैदियोंको अतिशय आनन्द मिला था। गाड़ीपर बैठते ही वे लोग हँसी तथा बातोंका फव्वारा छोड़ने लगते थे और दस मिनटतक जबतक वे लोग गाड़ीपर रहते थे, तब तक वह हँसी तथा बातों का स्रोत नहीं टूटता था। पहले दिन हम लोगोंको बड़े सम्मान

भावविकाशसे मेरे सम्पूर्ण हृदयपर अधिकार कर एक ऐसी निर्मल महती शान्ति विराज करने लगी, कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हृदयका कठिन आवरण खुल गया और सभी जीवोंके ऊपर प्रेमका स्रोत बहने लगा। प्रेमके साथ दया, करुणा अहिंसा इत्यादि सात्विक भाव मेरे रजोप्रधान स्वभावको अभिभूतकर विशेष विकाश पाने लगे। और जितना ही इनका विकाश होने लगा, उतना ही आनन्द बढ़ने लगा और निर्मल शान्त भाव गभीर हो गया। मुकदमेकी दुश्चिन्ता पहलेसे ही दूर हो गयी थी, इस समय एक विपरीत भाव, मनमें आ बैठा। भगवान मङ्गलमय हैं, मेरे मङ्गलके लिये ही मुझे कारागृहमें ले आये हैं। निश्चय कारागृहसे मुक्ति और अभियोगका खण्डन होगा, इसका दृढ विश्वास हो गया। इसके बाद बहुत दिनों तक मुझे जेलका कोई कष्ट नहीं भोगना पड़ा।

इस अवस्थाके घनीभूत होने में कई दिन लगे। इसी बीचमें मजिस्ट्रेटकी अदालतमें मुकद्दमा आरम्भ हुआ। निर्जन कारावासकी नीरवतासे एक व एक बाह्य संसारके कोलाहलमें आकर पहले तो मन बहुत विचलित हुआ, साधनाकी स्थिरता टूट गयी और उस पाच घण्टे तक मुकद्दमेकी नीरस तथा उदासीनता भरी बातें सुननेके लिये मन किसी प्रकार तैयार नहीं हुआ। पहले तो अदालतमें बैठकर साधना करनेकी कोशिश की, पर अनभ्यस्त मन प्रत्येक शब्द और दृश्यकी ओर खिच जाता था। उस भीड़में चेष्टा व्यर्थ हो जाती थी। पीछे भावका परिवर्तन

इन्तजाम करते थे। इससे शायद दो दिनों तक तो दो चार और सर्जेंट आये थे पर, उसके बाद फिर वही रफ्तार बेढंगी आरम्भ हुई। सर्जेंटोंने जब देखा, कि ये धर्मके भक्त बड़े निरीह और शान्त मनुष्य हैं, ये लोग भागनेका कोई उपाय नहीं करते, किसी पर आक्रमण या किसीकी हत्या भी ये नहीं करना चाहते, तब इन लोगोंने सोचा, कि हम लोग अपना अमूल्य समय क्यों व्यर्थ में यहां खर्च करें। पहले अदालतमें जाने और वहांसे बाहर निकलनेके समय हम लोगोंकी तलाशी ली जाती थी। इस समय सर्जेंटोंके कोमल करोंके स्पर्शका सुख मिलता था। इसके सिवाय इस तलाशीसे किसीकी कुछ हानि या लाभ होनेकी सम्भावना नहीं थी। विश्वस्तसूत्रसे मालूम हुआ, कि इस तलाशीकी प्रयोजनीयतामें हमारे रक्षकोंकी आस्था नहीं थी। दो चार दिनोंके बाद यह काम भी बन्द हो गया। हम लोग निर्विघ्नताके साथ पुस्तकें, रोटी, चीनी जो चाहते थे, अदालतके भीतर, ले जाते थे। पहले तो लुक छिपकर इन चीजोंको ले जाते थे, पर पीछे खुले आम तौरसे ले जाने लगे। हम लोगोंके बम या पिस्तौल छोड़नेका विश्वास उनके मनसे दूर हो गया। पर देखा, कि एकमात्र सर्जेंटोंके मनसे यह भाव अभी दूर नहीं हुआ है। उनके मनमें सदा इस बातका भय लगा रहता था कि बम या पिस्तौल न रहनेसे क्या होता है? कौन जाने कब किसके मनमें मजिस्ट्रेट साहबके महिमान्वित मस्तक पर जूता चलानेका बुरा विचार हो जायेगा। अगर कहीं ऐसा हुआ, तो

के साथ अदालतमें लाया गया। हम लोगोंके साथ युरोपियन सर्जेण्टोंकी छोटी पलटन हाथमें पिस्तौल लिये हुए रहती थी। गाड़ी पर चढ़नेके समय सशस्त्र पुलिसका एक दल हम लोगोंको घेरे रहता था और गाडीके पीछे कवायद करता था।

गाडी परसे उतरनेके समय भी यही प्रबन्ध था। इस आयोजनको देखकर कोई कोई अनभिज्ञ दर्शक अवश्य समझता था, कि यह हास्यप्रिय अल्पवयस्क बालकोंका दल न मालूम कैसे दु साहसिक महायोद्धाओंका दल है। नहीं मालूम इनके हृदय और शरीरमें कितना साहस—कितना बल है, कि खाली हाथ रहने पर भी सैकड़ों पुलिस और गोरोंके दुर्भेद्य दीवारको तोड कर पलायन करनेमें समर्थ है। इसीसे मालूम होता है कि बडे सम्मानके साथ इनको लाया जाता था। कुछ ही दिनों तक यह ठाट-बाट था, उसके बाद धीरे-धीरे कम होने लगा। अन्तमें दो चार सर्जेण्ट हम लोगोंको ले आते तथा ले जाते थे। अब गाड़ी परसे उतरनेके समय वे लोग उतनी सावधानीके साथ नहीं देखते थे, कि हम लोग किस प्रकार उतर रहे हैं, मालूम होता था, कि स्वाधीन भावसे टहलकर हम लोग अपने घरमें घुस रहे हैं। यह ढीलाढीली और लापरवाही देखकर पुलिस कमिश्नर साहब और सुपरिण्टेण्डेण्ट नाराज होकर कहते थे—"पहले दिन पच्चीस-तीस सर्जेंटोंका प्रबन्ध किया था, पर अब देखता हू, कि चार पाच सर्जेण्ट भी नहीं आते हैं।" वे लोग सर्जेण्टोंका तिरस्कार करते थे और देख-रेखका कड़ी

दो वरसोंके मध्यमें नाना प्रकारके जीव। वङ्गजननीके क्रोडमें उत्पन्न हुए थे, पर आठ दस असाधारण प्रतिमावान, शक्तिमान भविष्यकालके पथप्रदर्शकके सिवाय इस दो श्रेणीके अतीत तेजस्वी आर्य्यसन्तान प्राय नहीं देखे जाते थे। वङ्गालियोंमें बुद्धि थी, मेधाशक्ति थी, किन्तु शक्ति और मनुष्यता नहीं थी। पर इन बालकोंको देखते ही मालूम होता था, मानों पूर्व समय के पूर्व-शिक्षा प्राप्त उदारचेता दुर्दान्त तेजस्वी सभी पुरुष फिर भारतवर्षमें लौट आये हैं। वह सरल, निर्भीक दृष्टि वह तेज भरी बातें, वह भावनाशून्य आनन्दमय हास्य, इस घोर विपद्के समय भी वही अक्षुण्ण तेजस्विता, मनकी प्रसन्नता, विमर्षता या सन्तापका अभाव उस समयके तमक्लिष्ट भारतवासियोंके नहीं हैं। नवीन युग, नवीन जाति, नवीन कार्य्यस्रोतके लक्षण हैं। ये यदि हत्याकारी हैं। तो कहना होगा कि हत्याकी रक्तमय छाया उनके स्वभावपर नहीं पड़ी है, क्रूरता उन्मत्तता, पाशविक भाव इनमें लेशभर भी नहीं था। ये लोग भविष्यके लिये या मुकद्दमेके फलके लिये लेशमात्र भी चिन्ता न कर बालकोंके कारावासके समय आमोद, हास्य, खेल, लिखने पढ़ने और समालोचनामें व्यतीत करते थे। उन लोगोंने बहुत शीघ्र जेलके कर्मचारी, सिपाही, कैदी युरोपीय सर्जेण्ट। डिटेक्टिव और कोर्टके सभी कर्मचारियोंके साथ मित्रता कर ली थी तथा शत्रु-मित्र, छोटे बड़ेका विचार न कर हंसी दिल्लगी करना आरम्भ कर दिया था। कोर्टका समय उनके लिये क्योंकि

सर्वनाश ही हो जायगा!" इसी लिये जूता लगाकर भीतर आने की सख्त मुमानियत थी और इस विषयमें सर्जेण्ट सर्वदा सावधान रहते थे। और किसी प्रकारकी सावधानताकी ओर उनका वैसा ध्यान नहीं था।

मुकद्दमेका स्वरूप एक विचित्र था। मजिस्ट्रेट, कौंसिली, गवाह, गवाही Exhibits आसामी सभी विचित्र थे। प्रतिदिन उसी गवाही तथा Exhibits का अविराम स्रोत, कौंसिलीका नाटकोचित अभिनय, उस बालक स्वभाव मजिस्ट्रेटकी बालकोचित चपलता तथा क्षुद्रता, यह अपूर्व आसामियोंका अपूर्व भाव देखकर कई बार मनमें यह कल्पना उठी थी, कि हम लोग ब्रिटिश विचारालयमें नहीं, बल्कि किसी नाटकशालाके रंगमञ्च पर या किसी कल्पनापूर्ण औपन्यासिक राजमें बैठे हैं।

(८)

मजिस्ट्रेटके कोर्टमें कोई उल्लेखयोग्य घटना हुई है, तो वह एकमात्र नरेन्द्रनाथ गोस्वामीकी गवाही है। इस घटनाका वर्णन करनेके पहले अपने विपदके साथ बालक आसामियोंकी भी कुछ बातें कहूंगा। कोर्टमें इन लोगोंका आचारण देखकर मैं भलीभांति समझ गया था, कि बंगालमें नवीन युग आ गया है, नयी सन्तति माताकी गोदमें रहने लगी है। पहलेके बंगाली लड़के दो प्रकारके थे, या तो वे शान्त, शिष्ट, निरीह, सच्चरित्र भीरु, आत्मसम्मान तथा उच्चाकांक्षासे रहित होते थे या दुश्चरित्र दुर्दान्त, अस्थिर ढग, संयम और सत्यता रहित होते थे। इस

हो चरमोंवयसकि मध्यमें नाना प्रकारके जीव बङ्गजननीके कोडमें उत्पन्न हुए थे, पर आठ दस असाधारण प्रतिमावान, शक्तिमान भविष्यकालके पथप्रदर्शकके सिवाय इस दो श्रेणीके अतीत तेजस्वी आर्य्यसन्तान प्राय नहीं देखे जाते थे। बङ्गालियोंमें बुद्धि थी, मेधाशक्ति थी, किन्तु शक्ति और मनुष्यता नहीं थी। पर इन बालकोंको देखते ही मालूम होता था, मानों पूर्व समयके पूर्व-शिक्षा प्राप्त उदारचेता दुर्दान्त तेजस्वी सभी पुरुष फिर भारतवर्षमें लौट आये हैं। वह सरल, निर्भीक दृष्टि वह तेजभरी बातें, वह भावनाशून्य आनन्दमय हास्य, इस घोर विपदके समय भी वही अक्षुण्ण तेजस्विता, मनकी प्रसन्नता, विमर्षता या सन्तापका अभाव उस समयके तम क्लिष्ट भारतवासियोंके नहीं हैं। नवीन युग, नवीन जाति, नवीन कार्यस्रोतके लक्षण हैं। ये यदि हत्याकारी हैं। तो कहना होगा कि हत्याकी रक्तमय छाया उनके स्वभावपर नहीं पडी है, क्रूरता उन्मत्तता, पाशविक भाव इनमें लेशभर भी नहीं था। ये लोग भविष्यके लिये या मुकद्दमेके फलके लिये लेशमात्र भी चिन्ता न कर बालकोंके कारावासके समय आमोद, हास्य, खेल, लिखने पढने और समालोचनामें व्यतीत करते थे। उन लोगोंने बहुत शीघ्र जेलके कर्मचारी, सिपाही, कैदी युरोपीय सर्जण्ट। डिटेक्टिव और कोटके सभी कर्मचारियोंके साथ मित्रता कर ली थी, तथा शत्रु-मित्र, छोटे बडेका विचार न कर हंसी दिल्लगी करना आरम्भकर दिया था। कोर्टका समय उनके लिये अत्यन्त उदासीका समय था, क्योंकि

मुकद्दमेके प्रहसनमें बहुत कम रस था। यहाँ समय व्यतीत करनेके लिये उनके पढ़नेकी पुस्तकें नहीं थीं और न बात चीत करनेकी अनुमति थी। जिन लोगोंने योग करना आरम्भ किया था, उन लोगोंने उस समय तक गोलमालमें ध्यान करना नहीं सीखा था। इन लोगोंके लिये यों चुपचाप समय व्यतीत करना कठिन काम होना ही चाहिये था। पहले तो दो चार आदमी पढ़नेके लिये भीतर पुस्तकें लाते थे। इन लोगोंकी देखा देखी सबने इसी उपायका अवलम्बन किया। इसके बाद यह विचित्र दृश्य देखा जाता था, कि मुकद्दमा चल रहा है; तीस चालीस आसामियोंके भविष्यको लेकर लोग खींचातानी कर रहे हैं, उसका फल फांसी या यावज्जीवन द्वीपान्तरवास हो सकता है, इतने पर भी वही आसामी उस ओर ध्यान न देकर कोई बङ्किमका उपन्यास, कोई विवेकानन्दका राजयोग, या Science of Religions, कोई गीता, कोई पुराण, और कोई युरोपीय दर्शन एकाग्र मनसे पढ़ रहे हैं। अंगरेज सर्जेण्ट या देशी सिपाही कोई भी उनके इस काममें रुकावट नहीं डालता था। इन लोगोंने सोचा था, कि यदि इसीसे बाघ पींजडामें शान्त होकर रहें, तो हम लोगों का भी काम हल्का हो, विशेषत इससे किसी की कोई हानि नहीं थी। किन्तु एक बर्ले साहबकी दृष्टि उस दृश्य की ओर गयी। यह आचारण मजिस्ट्रेट साहब को असह्य हो गया। दो दिनों तक तो वह कुछ भी नहीं बोले, पर अब वह नहीं रह सके, पुस्तकोंका आना बन्द करनेका हुक्म दिया।

वास्तवमें वहाँ साहब ऐसा सुन्दर विचार करते थे, कि उसे सुनकर उन लोगोंको आनन्द प्राप्त करना चाहता था, उस अवसरपर पुस्तक द्वारा मनोरञ्जन प्राप्त करनेकी आवश्यकता नहीं थी। इसमें सन्देह नहीं कि उक्त आसामियोंके उक्त आचारण से वहाँ के गौरव और वृटिश जस्टिसकी महिमाके प्रति घोर असम्मान प्रदर्शित होता था।"

हम लोग जबतक भिन्न भिन्न कमरोंमें आबद्ध थे, तबतक केवल मजिस्ट्रेटके आनेके पहले एक घंटा आध घंटा तक और टिफिनके समय कुछ बात चीत करनेका अवसर पाते थे। जिनकी आपसमें जान पहचान या बातचीत थी, वे लोग इसी समय Cell की नीरवता और निर्जनताका बदला चुका लेते थे, हास्य, आमोद प्रमोद और अनेक विषयोंकी आलोचनामें समय बिताते थे। परन्तु ऐसे अवसरपर अपरिचित मनुष्योंके साथ बात चीत करनेकी सुविधा नहीं होती थी। इसीलिये मैं अपने भाई बारीन्द्र और अविनाशके सिवाय और किसीसे अधिक वार्तालाव नहीं करता था; उनके हास्य और गल्प सुनता था, स्वयं उसमें योग नहीं देता था। पर एक आदमी मेरे निकट बीच बीचमें चला आता था वह था भावी Approver नरेन्द्रनाथ गोस्वामी। अन्य लड़कोंके समान उसका शान्त और शिष्ट स्वभाव नहीं था, वह साहसी लघुचेता और चरित्र बात तथा कामोंमें असयत था। पकड़े आनेके समय नरेन्द्र गोस्वामीने अपना स्वाभाविक साहस और

प्रगल्भता दिखलायी थी, पर लघुचेता होने के कारण कारावास का थोड़ा दुःख और असुविधा सहन करना उसके लिये असाध्य था। वह जमीन्दारका लडका था, इसलिये सुख विलास और दुर्नीतिमें लालित पालित होकर कारागृहके कठोर संयम और तपस्यासे अत्यन्त कातर हो गया था और अपने उस भावको वह सब किसीके सामने प्रकट करनेमें भी कुण्ठित नहीं होता था। चाहे जिस किसी उपायसे इस यन्त्रणासे मुक्त होने की उत्कट वासना उसके मनमें दिनोंदिन बढने लगी। पहले उसकी आशा थी, कि अपनी स्वीकारोक्ति प्रत्याहार कर प्रमाणित कर सकूंगा कि पुलिसने मुझे शारीरिक यन्त्रणा दे कर दोष स्वीकार करा लिया था। उसने हमलोगों पर प्रकट किया कि मेरे पिता वैसे झूठे गवाह संग्रह करनेके लिये सङ्कल्प कर चुके थे। पर थोडे ही दिनोंमें उसका एक दूसरा भाव मालूम हुआ। उसके पिता मुख्तार थे, वह उसके निकट जेलमें बहुत आने-जाने लगे, अन्तमें डिटेकृटिव शमसुल आलम भी उसके निकट आकर बहुत देर-देरतक एकान्तमें बात चीत करने लगे। इसी समय हठात् गोस्वामीको कौतूहल और प्रश्न करने की प्रवृत्ति हुई जिससे बहुतोंके मनमें सन्देह हुआ। भारतवर्ष के बडे-बडे आदमियोंके साथ उनकी बात चीत या घनिष्ठता थी या नहीं? किन किन लोगोंने गुप्त-समितिको आर्थिक सहायता देकर उसका पोषण किया था? समितिके कौन कौन आदमी बाहर या भारतवर्ष के अन्यान्य प्रदेशोंमें थे? कौन मनुष्य समितिका

काम चलावेंगे? कहाँ शांति समिति है? इत्यादि कितने ही छोटे बड़े प्रश्न वारीन्द्र तथा उपेन्द्रसे करता था। गोस्वामीकी इस ज्ञान-तृष्णाकी बात, बातकी बातमें सबलोगोंके कानोंतक पहुँच गयी और शमसुलआलमके साथ उसकी घनिष्ठता भी अब गोपनीय प्रेमालाप न होकर Open secret हो गया। उस बातको लेकर बहुत आलोचना होती और कुछ लोगोंने यह भी लक्ष्य किया कि इस प्रकार पुलिससे भेंट करनेके बाद ही गोस्वामीके मनमें ऐसे नये नये प्रश्न उठते थे। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं होगी कि इन सब प्रश्नोंका सन्तोष-जनक उत्तर उसे नहीं मिला। जब पहले पहल यह खबर आसामियोंके बीचमें फलने लगी, तब गोस्वामीने स्वयं स्वीकार किया था कि पुलिस मेरे निकट आकर 'सरकारी गवाह' होनेके लिये मुझको कई प्रकारसे समझानेकी चेष्टा करती है। उसने एक बार कोर्टमें मुझसे यह बात कही थी। उस समय मैंने उससे पूछा था, कि आपने क्या उत्तर दिया है? उसने कहा मैं क्या पुलिसकी बात सुन सकता हूं! और सुनने पर भी क्या मैं उसके मन लायक गवाही दूंगा? उसके कुछ दिनों बाद जब फिर उसने यह बात कही, तब देखा, कि मामला बहुत दूर तक चला गया है। जेलमें Identification parade के समय मेरी बगलमें वह खड़ा था। उस समय उसने मुझसे कहा, "पुलिस केवल मेरे ही पास आती है।" मैंने हँसीके साथ कहा—"आप यह बात क्यों नहीं कह देते कि सर एण्ड्रूज

फ्रेजर गुप्त समितिके प्रधान पृष्ट पोषक थे, ऐसा यदि आप कह देते तो उन लोगोंका परिश्रम सार्थक हो जाता।" इस पर गोस्वामीने कहा—"मैंने भी इसी तरहकी बात कही है। उन लोगोंसे कहा है, कि सुरेन्द्रनाथ बनर्जी हम लोगोंके head हैं और मैंने एक बार उनको बम दिखाया था।" मैं इस बातको सुनकर स्तम्भित हो गया। मैंने पूछा—"यह कहनेका प्रयोजन क्या था?" गोस्वामीने कहा—मैं .. .. नाश करके तो दम लूंगा। इसी ढङ्गकी और भी बहुत सी खबरें दी हैं। साले corroboration खोजते फिरें। हो सकता है, कि इस उपायसे मुकद्दमा ही न चल सके।" इसके जवाबमें मैंने केवल इतना ही कहा था, कि आप "यह लडकपन छोड दीजिये। उन लोगोंके साथ चालाकी खेलेंगे, तो स्वयं विपदमें पड जायँगे।" मैं नहीं कह सकता, गोस्वामीकी उक्त बात कहां तक सत्य थी। अन्य सभी आसामियोंकी राय थी, कि हम लोगोंकी आखोंमें धूल झोंकनेके लिये उसने उस उपायका अवलम्बन किया था। मेरा विचार है कि उस समय तक वह approvel होनेके लिये पूरा निश्चय नहीं कर सका था, यद्यपि उसकी इच्छा उस विचारकी ओर बहुत दूर तक चली गयी थी, पर पुलिसको ठगकर उसका केस विगाड देनेकी भी उम्मीद थी। चालाकी और अनुचित उपायसे कार्य-सिद्धिका विचार दुष्टप्रवृत्तिका स्वाभाविक फल होता है। उसी समयसे मैं समझ गया था कि गोस्वामी, पुलिसके वशीभूत

हो झूठ साच, जिसकी उन्हें आवश्यकता है, वह कह कर अपनेको बचानेकी कोशिस करेगा। मैं प्रतिदिन देखने लगा, कि गोस्वामीका मन किस प्रकार बदल रहा है, उसका मुख भाव भङ्गी बात-चीत सब बदल रहा है। वह विश्वासघात अपने साथियोंका सर्वनाश करनेका जो प्रबन्ध कर रहा था, उसका समर्थन करनेके लिये वह धीरे धीरे राजनोतिक और अर्थ नीतिक युक्ति निकालने लगा। ऐसा interesting Psychological study प्राय नहीं पायी जाती।

गोस्वामीकी बातपर विश्वास करनेसे यह विश्वास करना पड़ता है, कि उसीके कहनेसे हमलोगोंका निर्जन कारावास छूटा और एक साथ रहनेका हुक्म मिला। उसने कहा था, कि पुलिसने मुझे सबके साथ रखकर षड्यन्त्रकी गुप्त बातोंका पता लगाने के लिये यह प्रबन्ध किया है। उस समय तक गोस्वामी नहीं जानता था, कि सब लोगोंने पहलेसे ही उसके निश्चयका पता लगा लिया है। इसीलिये वह कौन षड्-यन्त्रमें सम्मलित हैं, कहा शाखासमिति है, कौन रुपये देता या सहायता पहुचाता है इस समय कौन गुप्त समितियोंका काम चला रहा है, इस प्रकारके कितने प्रश्न करने लगा है। ऐसे प्रश्नोंका जैसा उत्तर उसे मिलता था, उसका दृष्टान्त ऊपर दिया जा चुका है। पर गोस्वामीकी अधिकांश बातें मिथ्या होती थीं। डाक्टर डेलने हमलोगोंसे कहा था, कि मैंने ही एमर्सन साहबसे कह सुनकर ऐसा प्रबन्ध कराया है। सम्भवतः डेली

की बात सच्ची है; हो सकता है, कि पुलिसने इस नवीन प्रबन्धका समाचार पा उससे ऐसे लाभकी कल्पना की हो। खैर जो हो, इस परिवर्त्तनसे मुझे छोडकर सबको आनन्द हुआ, मैं उस समय मनुष्योंसे मिलना नहीं चाहता था, उस समय मेरी साधना खूब मजेमें चल रही थी। समता, निष्कामता, और शान्तिका बहुत कुछ स्वाद पा चुका था, पर उस समयतक भी मेरा यह भाव दृढ नहीं हुआ था। लोगोंसे मिलनेपर दूसरेके चिन्ता-स्रोतका आघात मेरी अपक नवीन चिन्ताके ऊपर पडनेसे इस इस नये भावका ह्रास हो सकता है, हमारा यह नया भाव नष्ट भी हो सकता है। सचमुच ऐसा ही हुआ भी। उस समय मैं नहीं जानता था कि मेरे साधनपनकी पूर्णताके लिये विपरीत भावका उद्रेक था, इसीलिये अन्तर्यामीने एकबएक मुझे मेरी प्रिय निर्जतासे वञ्चितकर उद्दाम रजोगुणके स्रोतमें डाल दिया और सबलोग आनन्दसे अधीर हो गये। उसी रात जिस घरमें हेमचन्द्र दास, शचीन सेन इत्यादि गायक थे, वह घर सर्वापेक्षा बृहत् था। अधिकाश आसामी वहीं रहते थे और रातमें कोई दो तीन बजेतक सो नहीं सकता था। रातभर हँसीका फव्वारा, सङ्गीतकी अविराम धारा बहती रहती थी, जिससे वहाँ बराबर गुलजार रहता था। मैं तो सो जाता था, पर जब कभी नींद टूटती थी, तब वही हँसी वही गान, वही गल्प सुन पडता था। अन्तिम रातमें यह गुलजार कुछ कम हो गया, गानेवाले भी सो गये और हमलोगोंका वार्ड नीरव हो गया।

डी० एन० *सिगतिया* कम्पनी, कलकत्ता

का

नवीन सूचीपत्र ।

लाला लाजपतराय ।

पञ्जाब-केशरी स्वनामधन्य लाला लाजपतरायका सचित्र जीवनचरित्र। लालाजीके जन्मसे लेकर आजतककी सभी घटनाओंका समावेश है। हिन्दीमें इतनी सामयिक जीवनी दूसरी नहीं है। मूल्य ॥) मात्र।

राष्ट्रीय गीत ।

राष्ट्रीय देशभक्ति पूर्ण गायनोंका अपूर्व संग्रह। पढते ही चित्त फडक उठता है। आज ही मंगाकर पढिये। मूल्य ≶) आना

अहमदाबाद कांग्रेस ।

अहमदाबाद—खादीनगरमें होनेवाली ३६ वीं राष्ट्रीय महासभा (नेशनल कांग्रेस) का पूरा पूरा कार्य्य विवरण और उसमें

दिये हुए व्याख्यानोंका अपूर्व संग्रह। प्रत्येक देशभक्तको इसे अवश्य पढ़ना चाहिये। मूल्य ।) आना।

तपोनिष्ठ महात्मा अरविन्द घोष।

महाप्राण अरविन्द घोषका सचित्र जीवनचरित्र और उनके लेख तथा व्याख्यानों और अपनी स्त्रीको लिखे पत्रोंका अपूर्व संग्रह। किस प्रकार अरविन्दने विलायतमें रहकर विद्याध्ययन किया, किस प्रकार बड़ौदा-नरेश उनके पाण्डित्यपर मुग्ध हुए, किस प्रकार उन्होंने बड़ौदा राज्यके एक उच्चपदको त्यागकर देशसेवाका व्रत ग्रहण किया—यह सब इसमें आ गया है। हरेक स्वदेशानुरागीको यह पुण्य चरित पढ़ना चाहिये। मूल्य ॥) आना।

हितकारक।

यह पुस्तक स्त्री पुरुष सभीके देखने योग्य है। इसमें स्वास्थ्य रक्षाके उत्तमोत्तम नियम और स्वास्थ्य अच्छा रहनेपर धन उपार्जन करनेकी विधि पूरे तौरसे दिखायी गयी है। यदि आप स्वास्थ्य रक्षाके साथ ही साथ धनी भी हुआ चाहते हों तो इसे पढ़िये। मूल्य केवल ≈)।

श्रीमद्भगवत् गीता।

मूल श्लोक और हिन्दी भाषानुवाद सहित रेशमी जिल्द बुक। मूल्य ॥)।

पंजाबका हत्याकाण्ड।

पञ्जाबमें होनेवाले भीषण अत्याचारोंका जीता जागता चित्र यदि देखना चाहते हैं, यदि जानना चाहते हैं, कि मार्शल लाकी अमलदारीमें निःशस्त्र भारतवासियोंपर कैसा हृदय-विदारक अत्याचार किया गया है, यदि पञ्जाबी भाइयोंकी दुःखभरी, दर्द भरी और कलेजेको मसोसनेवाली घटनाएं सुनना चाहते हैं और जेनरल डायरके क्रूर कर्मकी काली कथा कर्णगोचर करना चाहते हैं, साथ ही यदि जानना चाहते हैं, कि हमारी पञ्जाबी माताओं और बहनोंकी किस तरह बेइज्जती हुई है, तो इसे पढ़कर अपना कर्त्तव्य विचारिये। कई चित्रोंसे सुशोभित पुस्तकका मूल्य बड़ा २) मझोला १) छोटा ॥=)।

भीमसिंह।

ऐतिहासिक उपन्यासोंका राजा है। अलाउद्दीनकी चित्तौड़-पर बारह चढ़ाइयोंका पूरा पूरा हाल, राणा लक्ष्मण सिंहका १२ राजकुमारोंके साथ प्राणाहुति देना, अलाउद्दीनकी लड़की कन्या मतीवनका अद्भुत रहस्य, बारह वर्षके बालक बादल और साठ वर्षके वृद्ध गोराका अद्भुत युद्धकौशल, राणा भीम-सिंहका विलक्षण त्याग, महाराणी पद्मिनीका हजारों राजपूत बालाओंके साथ सती होना प्रभृति घटनाएं पढ़कर पाठक दङ्ग हो जायेंगे। मूल्य २॥) सजिल्द ३)।

अगरचंद भैरोंदान सेठिया
जैन ग्रन्थालय

नवीन राष्ट्रीय पुस्तकें।

संसारव्यापी असहयोग.

असहयोग क्या है ? उसका उपयोग अभीतक किन किन देशोंने किया है ? वे कहातक सफल हुए हैं ? आदि आदि बाते जाननी हों तो इस पुस्तकको पढ़िये। मूल्य ॥≈) आना।

भारतको स्वाधीनताका सन्देश.

इसमें म० गान्धीके उन लेखों और व्याख्यानोंका संग्रह है जिनके पढ़नेसे सिद्ध होता है कि भारतके लिये अब शीघ्र ही स्वतन्त्रता की कितनी आवश्यकता है। मूल्य १।) रु०।

संसारका सबसे बड़ा महापुरुष.

इसमें विदेशियोंकी लेखनीसे जो कुछ निकला है, उसे पढ़कर समझ सकते हैं, कि इस समय महात्मा गान्धी ही संसारमें सबसे श्रेष्ठ महापुरुष हैं। मूल्य ≋) आना।

पंजावका भीषण नर-हत्याकाण्ड

पञ्जाबमें होनेवाली भीषण घटनाओंका जीता जागता चित्र। पञ्जाबी भाइयोंकी दुःख भरी और दिलको मसोसने वाली आत्मकहानी। मूल्य ॥≈) आना।